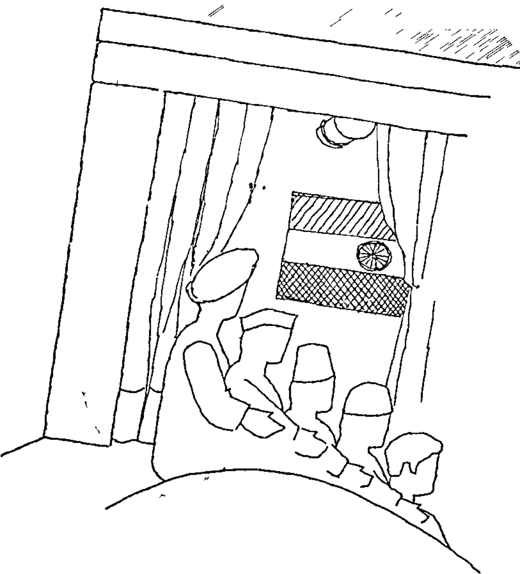
# राष्ट्रीय एकता के एकांकी



# राष्ट्रीय एकता के एकांकी

सम्पादक : गिरिराज शरण



प्रभात प्रकाशन, दिल्ली

प्रकाशक : प्रभात प्रकाशन, चावड़ी बाजार, दिल्ली-११०००६
मुद्रक : कला भारती, नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२ / सर्वाधिकार : सुरक्षित
संस्करण : प्रथम, १९९०
मूल्य : सत्तर रुपये

RASHTRIYA EKTA KE EKANKI
Ed by Dr Giriraj Sharan
Published by Prabhat Prakashan, Chawri Bazar Delhi 110006
Rs 70.00

# दो तोपें चाँदी की

आँख खुलते ही एक आहट कान मे आई।

जैसे बाहर की तरफ से खुलने वाली खिडकी से कोई चीज़ कमरे के भीतर आकर गिरी हो। आवाज़ परिचित थी। विश्वास हो गया कि आवाज़ प्रात कालीन समाचार-पत्र की है, जो प्रतिदिन इसी खिडकी से इसी प्रकार, इसी आहट के साथ फर्श पर आकर गिरता है और मन मे जिज्ञासा पैदा करता है यह जानने की कि पिछले चौबीस घण्टो मे दुनिया पर क्या बीती है।

सुबह का सूरज अभी निकला नही है और अगर निकला है, तो उसका प्रकाश अभी मेरे कमरे, मेरे घर की दीवारो पर या अँगनाई तक नही पहुँचा है, क्योकि आस-पास खडी ऊँची कोठियो ने अभी उसे पूरी तरह रास्ता नही दिया है। आसमान को चूमते हुए भव्य भवन अब भी उसके रास्ते मे बाधा बने खडे हैं। लेकिन यह तो सूर्य है, महान् और कभी पराजित न होने वाला सूर्य, जो ऊपर चढता ही जाएगा, चढता ही जाएगा, यहाँ तक कि दोपहर होने तक इन विशाल भवनो की परछाइयाँ भी सिकुडकर बौनी हो जाएँगी। यह तो सूर्य देवता है, जिसका प्रकाश सबके लिए समान है, सबके लिए बराबर। यह गरीब घर का दीया नही है, जो स्वय अपने आँगन को भी पूरी तरह प्रकाशित नही कर पाता। दीये को तेल और बाती आदमी देता है, आदमी जिसने मानव-समाज मे असमानता के बीज बोए, जिसने समाज मे छोटे-बडे वर्गों की स्थापना की और जिसने अँधेरे और उजाले को विभाजित कर उसे अलग-अलग श्रेणियो मे बाँट दिया, लेकिन यह तो सूरज है, जिसे उजाला प्रकृति देती है, आदमी नहीं···

विचारो का एक रेला मेरी तरफ बढता है और मस्तिष्क पर छा जाता है। कमरे मे धूप नही है लेकिन रोशनी अवश्य आ गई है, सोचता हूँ कि ऊँची दीवारें और ऊँची अटारियाँ सूरज की किरणो को निस्सदेह कुछ क्षण के लिए मेरी खिडकी तक आने से रोक सकती हैं, लेकिन उसकी रोशनी को फैलने से रोकने वाला कोई नही है।

किचन से बर्तन खनकने की आवाज आती है, विश्वास हो जाता है, पत्नी चाय बनाने मे व्यस्त होगी। आँखो से देखे बिना आदमी कितनी ही चीजो को

केवल अपने अनुभव और विवेक की दृष्टि से देख लेता है। आश्चर्य की बात है।

मैंने अखबार नहीं देखा लेकिन निश्चित समय पर होने वाली एक विशेष आवाज ने मुझे बता दिया कि यह कुछ और हो या न हो, अवश्य ही आज का अखबार है, जिसे रोज की भाँति हॉकर मेरी खिड़की से फेंक गया है।

मैंने पत्नी को चाय बनाते नहीं देखा लेकिन प्रतिदिन की बर्तनों की सुपरिचित आहट ने मुझे बता दिया कि पत्नी किचन में है और मेरे लिए चाय तैयार कर रही है। मैं चाय की प्रतीक्षा करता हूँ और जैसे ही खिड़की के नीचे हाथ बढ़ाता हूँ, नज़र अचानक बाहर सड़क पर जाती है। सड़क से एक आदमी गुज़र रहा है। उसका ऊपर का धड़ मेरी आँखों से ओझल है, मैं केवल उसके निचले धड़ और पैर ही देख पा रहा हूँ। सम्पूर्ण आदमी को नहीं।

तो क्या मुझे कहना चाहिए,

कि यह आदमी पूरा नहीं—

अधूरा आदमी है—

क्योंकि इसका जो भाग मेरे सामने प्रमाणित नहीं है उसे कल्पना के आधार पर स्वीकार करना मेरे लिए आवश्यक क्यों है? मैं कह सकता हूँ कि इसका निचला धड़ मेरे सामने है, ऊपर का नहीं, इसलिए यह आदमी अधूरा है, और केवल अपने निचले धड़ के सहारे एक-एक पग आगे बढ़ते हुए अपनी यात्रा पूरी कर रहा है।

लेकिन मैं ऐसा नहीं कहूँगा,

क्योंकि समाचार-पत्र मैंने खिड़की से अन्दर आते नहीं देखा लेकिन विवेक और अनुभव से जान गया कि यह समाचार-पत्र ही है, जो हॉकर खिड़की से भीतर फेंक गया है।

पत्नी को चाय बनाते हुए मैंने नहीं देखा लेकिन प्रतिदिन की परिचित आहट ने मुझे बताया कि किचन में निश्चित तौर पर पत्नी ही है, जो इस समय मेरे लिए चाय बना रही है।

सचाइयाँ मात्र आँखों से प्रमाणित नहीं होतीं, अनुभव से भी होती हैं। जैसे आदमी का यह निचला धड़ जो मेरे सामने से गुजर रहा है, मुझे विवश करता है, इस सचाई को मानने पर कि उसका ऊपर वाला धड़ भी अवश्य होना चाहिए और अवश्य होगा। यह केवल अनुभव और विवेक ही है, जो आँखोंदेखी अधूरी सचाई को पूर्ण कर रहा है, इसके लिए किसी अन्य प्रमाण की आवश्यकता नहीं है।

विचारों की बाढ़ अब तक मेरे मस्तिष्क को घेरे है, अखबार मैंने फर्श से उठाकर अपने सिरहाने रख लिया है।

अब तक के विचारों को काटती हुई, सोच की एक और लहर मेरे भीतर उठती है—

मुझे लगता है, दुनिया में पूरे आदमी ही नहीं आधे-अधूरे आदमी भी होते हैं।

———

ऐसे आदमी जिन्होंने अपना ऊपर का धड या तो बेच दिया है, अथवा किसी के हाथ गिरवी रख दिया है या फिर जीवन के मोह अथवा मृत्यु के भय ने उन्हे इस बात के लिए विवश कर दिया है कि वे अपने ऊपरी धड को अपनी निर्लज्जता के नीचे छिपाये रखें और स्वाभिमान के परदे पर उसका प्रतिबिम्ब न पडने दें। बिल्कुल इस प्रकार जैसे कछुआ तनिक-सा भय पाते ही अपनी गर्दन को शरीर के पथरीले खोल के भीतर छुपा लेता है।

ऐसे कितने ही लोगो की छवि मेरे स्मृति-पटल पर उभरती है और गायब हो जाती है।

जयचन्दो और मीर जाफरो की एक लम्बी पक्ति है, जो धीरे-धीरे मेरे सामने आती है और चुपचाप गुजर जाती है। ये वही लोग हैं, जिनका ऊपरी धड नही है, जो आधे हैं, अधूरे हैं और जिन्होने अपने ऊपर का भाग या तो बेच खाया है या भय अथवा लालच से कछुए की भाँति अपने ही खोल के अन्दर समेट लिया है। मैं घृणा और तिरस्कार से इस पक्ति की तरफ देखता हूँ और अखबार खोलकर अपने सामने फैला लेता हूँ।

पृष्ठ के निचले भाग मे एक छोटी-सी खबर छपी है। सम्पादक ने इसे कोई विशेष महत्त्व नही दिया है, शीर्षक है—

'रक्षा मन्त्रालय के एक उच्च अधिकारी ने सेना के महत्त्वपूर्ण रहस्य विदेशी एजेंट को बेचे।'

पढकर एक कडवाहट मेरे रक्त मे घुल गई है। क्रोध की एक लहर है, जो रीढ की हड्डी से होती हुई मेरी मासपेशियो मे अकडाहट पैदा कर रही है।

विचार आता है कि देशद्रोह का यह समाचार जिसे प्रमुखता मिलनी चाहिए थी, क्यो नही मिली ? उत्तर मिलता है, शायद हम देशद्रोह और राष्ट्र-विरोधी ऐसी घटनाओ को सुनने-देखने के अभ्यस्त हो गए हैं। अब ऐसी घटनाएँ हमे न तो चौंकाती ही हैं और न दुखी करती हैं।

ऊपर के धड से वचित आधे-अधूरे लोग हमारे सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन को दीमक की तरह लग गए हैं और अब यह एहसास भी हमारे अन्दर धूमिल होता जाता है कि राष्ट्रीयता का वह बहुमूल्य एव ऐतिहासिक वस्त्र जो हमारे पुरखो ने शताब्दियो के परिश्रम से बुना था, इन बौनो के हाथो धज्जी-धज्जी होने लगा है, परन्तु हम इन्हें सहन कर रहे हैं, क्षमा दे रहे हैं, क्योकि यह हमारा स्वभाव है, हमारी सस्कृति भी।

आशा नही कि कल के अखबार मे यह पढ पाऊँगा कि इस सगीन राष्ट्रविरोधी कृत्य के लिए उस अधिकारी को पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया है, जिसने रक्षा-सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण रहस्य किसी विदेशी एजेंट के हाथ कुछ धन लेकर बेच दिए हैं।

मुझे ज्ञात है कि कल के अखबार म ऐसा कोई समाचार नही होगा, क्योकि दोषी की पहुँच अपने ऊपर के लागो तक होगी और उसके हाथ वहाँ तक पहुँच रहे होंगे, जहाँ से कानून लागू किए जाते हैं।

अन्य खबरा की तरह, कल तक यह खबर भी पुरानी होकर भुला दी जाएगी, पाठक भूल जाएँग कि उच्च पद पर बैठे हुए किसी देशद्रोही न अपने निहित स्वार्थों के लिए राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरा पैदा कर दिया था।

मैं जानता हूँ, कानून उसे दण्डित नही करेगा, क्योकि कानून के हाथ तक वे प्रमाण नही पहुँच सकेंगे, जिनसे उसका अपराध सिद्ध होता हो।

तब हम क्या करें—? उन्हे कैसे बतायें कि स्वार्थ ही नही, जीवन से भी बडी है, राष्ट्रीय हित की भावना!

पत्नी चाय का कप रख गई है। मैंने गर्म-गर्म चाय का घूट लिया है और फिर वही सवाल मेरे सामने आ खडा हुआ है।

'तब हम क्या करे, उन्हे कैसे समझाएँ कि राष्ट्रीयता की भावना जीवन के मोह से बडी है?'

सोचता हूँ तो वे घटनाएँ मस्तिष्क मे जाग उठती हैं, जिन्होने विवशता और दासता की जजीरो मे भी हमे राष्ट्र के लिए समर्पित रहने की प्रेरणा दी थी—

आइये चले, दूर अतीत की ओर—

मुगल राज का सूरज अस्त हो रहा है। भारत विभिन्न रियासतो मे बँट गया है। अग्रेज एक एक करके सभी रियासतो को अपने पजो मे जकडते जा रहे है। शाही दरबार सिमटकर दिल्ली तक सीमित हो गया है। बडी-बडी रियासतें अग्रेज शासको की दासता स्वीकार कर चुकी हैं, और यह दासता उन शर्तो पर स्वीकार की गई है, जो अग्रेजो को पसद है, रियासतो के स्वामियो को नही।

देश भर मे वायसराय लार्ड कर्जन का दबदबा है। लार्ड कर्जन के नाम से अच्छे-अच्छे शूरवीरो को कँपकँपी आ जाती है।

लार्ड कर्जन एक एक रियासत का बारी-बारी दौरा करते है और जो चाहे माँग लेते हैं या बलात् वसूल कर लेते हैं।

इस राष्ट्रीय पराजय और पराधीनता के दौर मे बडौदा का महाराजा सयाजी राव गायकवाड जीवित है, अतीत के दम खम और स्वतत्र रियासतो का दबदबा लिये।

अग्रेज हरकारा आता है,

वायसराय लार्ड कर्जन का सदश उसके पास है।

लिखा है, वायसराय कल राजधानी बडौदा का दौरा करेंगे।

समय की परम्परा के अनुसार सारी रियासत सावधान हो गई है। सडको की सफाई, मकानो की मरम्मत और महल की साज सज्जा म हजारो आदमी लगे हुए

हैं। लार्ड को खुश करने के लिए सभी व्यवस्थाएँ की जा रही हैं। शिकार का विशेष प्रबन्ध है। सेना की टुकडियों को 21 तोपो की सलामी देने के लिए तैयार कर दिया गया है।

लार्ड के रियासत मे आगमन से पूर्व उस पूरे रास्ते पर बहुमूल्य मखमल का फर्श बिछा दिया गया है, जिससे लार्ड को अपने कठोर बूटो के साथ गुजरकर आना है—दोनो ओर दर्शको की पक्तियाँ हाथ बाँधे खडी हैं।

दरबार पूरी तरह सजा हुआ है। तभी ऐलची ने नौबत पर घोषणा की है कि लार्ड कर्जन की सवारी राजधानी की सीमाओ मे प्रवेश कर चुकी है।

सम्पूर्ण वातावरण फौजी बैंड की धुन मे गूंज उठा है।

घोडे पर सवार लार्ड कर्जन अपने लम्बे काफिले के साथ दरबार हॉल की तरफ बढ रहे हैं।

महाराजा गायकवाड तख्त से नीचे उतरकर शिष्टतापूर्वक लार्ड का स्वागत करते हैं।

तोपो की आवाज से चारो दिशाएँ दूर तक गूंज उठी हैं।

महाराजा सयाजी राव गायकवाड, कर्जन का हाथ अपने हाथ मे लिये महल की ड्योढी तक आते हैं। कर्जन की नजर ऊपर उठती है तो वह यह देखकर चकित रह जाता है कि महल के सुरक्षा कक्ष मे दो बडी तोपें लगी हैं जिनकी चमक सूरज की तेज रोशनी को भी मात दे रही है।

कर्जन तेजी से महल के सुरक्षा-कक्ष की तरफ लपकता है। तोपो को आश्चर्य से छूकर देखता है और महाराजा गायकवाड से पूछता है—

'ओह! इतनी सु दर और कलात्मक तोपें? किस धातु से बनी हैं—?'

महाराजा मूंछो के अन्दर मुस्कराते हैं। उत्तर मिलता है, 'फौलाद पर चाँदी की मोटी चादर है, जिस पर विशेष कारीगरो द्वारा बेहतरीन नक्काशी की गई है।'

लार्ड कर्जन तोपो को बार-बार छूकर देखता है और बार-बार उसका हाथ तोपो की नाल पर इस प्रकार फिसल जाता है, जैसे कोई अपनी प्रेयसी के रेशम जैसे शरीर को छू छूकर देख रहा हो।

कर्जन के पास प्रशसा के जितने शब्द थे, उसने इन तोपो की प्रशसा मे व्यक्त कर लिए हैं।

साफ सकेत है कि महाराजा गायकवाड को ये दोनो तोपें हिन्दुस्तान के वायसराय लार्ड कर्जन की सेवा मे हाथ बाँधकर भेंट कर देनी चाहिए।

क्यो—?

क्योकि अग्रेज साम्राज्य म विदेशी हाकिमो की परम्परा ही यह थी कि जिस रियासत की जो चीज उन्हे पसन्द आती, वह केवल उसकी प्रशसा मे कुछ शब्द

कहते थे और वस्तु अगले ही दिन उनकी सेवा मे प्रस्तुत कर दी जाती थी।

महाराजा गायकवाड ने तोपो के सम्बन्ध मे कर्जन की प्रशसा सुनी और तेवरो पर बल पड गये। पर कुछ बोले नही।

कर्जन ने दूसरा प्रसग छेडा। लेकिन बीच-बीच मे तोपो की प्रशसा करता रहा। सयाजी राव न केवल धन्यवाद के शब्द कहे और खामोश हो गए।

पूरे राजकीय सम्मान के साथ गुलाम भारत के वायसराय लार्ड कर्जन को राज्य से विदा कर दिया गया। लार्ड को पूर्ण विश्वास था कि राज्य की ओर से वे ऐतिहासिक तोपे उसकी सेवा मे प्रस्तुत कर दी जाएँगी, जो उसे पसन्द आ गई थी।

लेकिन ऐसा नही हुआ। दो दिन तक ऐसा नही हुआ। तीसरे दिन कर्जन क्रोध से फट पडा। उसने महाराजा गायकवाड के पास इस आदेश के साथ पत्रवाहक भेजा—

'चाँदी की वे तोपें, जिनकी राज्य के दौरे के समय हमने प्रशसा की थी तुरन्त हमारे दरबार मे प्रस्तुत की जाएँ, क्योकि हिन्दुस्तान का आदमी इस अद्भुत कला का महत्त्व नही समझ सकता। हम ये तोपे इग्लैंड भेज रहे हैं ताकि वहाँ के म्यूजियम मे सुरक्षित रखी जा सके।'

आदेश सुनकर महाराजा ने तिरस्कारपूर्ण ठहाका लगाया। अपने व्यक्तिगत पत्र लेखक को बुलाया। कहा—लार्ड के पत्र का जवाब दो—लिखो—

'हम जानते थे कि महामहिम को ये तोपे पसन्द आई और हमारा कर्त्तव्य था कि अगले ही दिन हम उन तोपो को सरकार की सवा मे पेश कर देते, क्योकि अग्रेज हाकिमो की पसद के मामलो मे अब तक की परम्परा यही रही है। देसी रियासतो की कितनी ही बहुमूल्य और ऐतिहासिक महत्त्व की वस्तुएं इसी अमानवीय परम्परा की भेट चढ चुकी हैं, लेकिन हम ऐसा नही कर रहे हैं क्योकि तोपे महल के रक्षा-कक्ष मे स्थापित थी और यह अद्भुत कला की ही नही, हमारे सम्मान की भी प्रतीक थी। हमने सोचा और अनुभव किया कि हम अपने हथियार इस सरलता से दुश्मन के हाथो मे सौपने को तैयार नही हो सकते। हम जानते है कि इसका परिणाम क्या होगा और हम उस परिणाम को भुगतने के लिए तैयार हैं।'

पत्रवाहक महाराजा गायकवाड का सदेश लेकर वापस चला गया है।

दरबार मे खामोशी छा गई है।

तभी सयाजी राव की आवाज सन्नाटे को तोडती हुई चारो ओर गूंज जाती है—

'इससे पहले कि अग्रेज सेना तोपें हासिल करने के लिए रियासत पर चढ़ाई करे, भट्टी मे डालकर तोपो को गला दिया जाए। राज्य की रक्षा के अस्त्रो को दुश्मन के हाथ मे पहुँचने से पहले गला दिया जाना उचित है, ताकि वह इनके

निर्माण का रहस्य न पा सके।' ऐसा ही किया गया, तोपें गला दी गईं।

मैं इस ऐतिहासिक घटना को याद करता हूँ और उस सुर्खी पर दृष्टि डालता हूँ, जिसमें लिखा है कि एक अधिकारी ने रक्षा से सम्बन्धित रहस्य एक विदेशी एजेंट के हाथों बेच दिये।

मेरे युग तक राष्ट्रीयता का कितना ह्रास हो चुका है, यह सोचकर काँप जाता हूँ, और ऐसी समस्त घटनाएँ एकत्र करने का प्रयास करता हूँ जो कलम के सिपाहियों ने लिखी और रची हैं, ताकि हम उनके पात्रों की भूमिकाओं से यह जान सकें कि राष्ट्रीय सम्मान और आत्म-सम्मान का अर्थ क्या है?

१६, साहित्य विहार,
बिजनौर (उ० प्र०)

(डॉ०) गिरिराजशरण अग्रवाल

# क्रम

राष्ट्रीय एकता के एकांकी

# सबसे सस्ता गोश्त



असगर वजाहत

---

[मचस्थल पर गायक आता है और गाना प्रारम्भ करता है।]

गायक : हिन्दू मुस्लिम सिख ईसाई
नही है कोई भाई-भाई
करते हैं सब मिल के लडाई
मारा-पीटा आग लगाई
जब देखो तब आफत आई
रोज लडाई, रोज भिडाई

[स्वर बदलकर]

धरम के नाम पर बच्चो की टाँगें चीर देते हैं
धरम के नाम पर औरत की छाती काट देते हैं
धरम के नाम पर जिन्दा जलाते हैं ये लोगो को
धरम के नाम पर लाशो की ये मण्डी सजाते हैं।

[गायक चला जाता है और मचस्थल पर एक हिन्दू नेता तथा एक मुसलमान नेता आते हैं। दोनो हाथ पकडकर नाचते हुए गाते हैं।]

दोनों : नेता हैं हम जात के
हिन्दू हैं न मुस्लिम
अरे काम हमारा लूट के खाना
हिन्दू हैं न मुस्लिम

[नाचते-नाचते रुक जाते हैं]

हिन्दू नेता : चुनाव सिर पर आ गए। काम कुछ हुआ नही। वोट लेना फिर पड़ेगा···वैसे तो मेरे चुनाव क्षेत्र मे हिन्दुओं का बहुमत है पर सब मुझसे घृणा करते हैं।

मुस्लिम नेता : मेरे चुनाव इलाके मे मुसलमानो की तादाद ज्यादा है पर वो सब मेरी शक्ल से नफरत करते हैं।

दोनो मिलकर : पर हम नेता हैं, हम नफरत को प्यार मे बदलना जानते हैं···हम उनसे कहेंगे···

मुस्लिम नेता : बिरादराने इस्लाम हिन्दुओ ने तुम्हे बर्बाद कर दिया। तुम्हारे घर उजाड दिए। तुम्हे जिन्दा जला दिया···लेकिन घबराने की क्या बात है, मैं तुम्हारे साथ हूँ···मैं···

हिन्दू नेता आर्यावर्त के सुपुत्रो, इन मलेच्छ मुसलमानो ने भारत-माता के टुकड़े कर डाले। इन्हे क्या अधिकार है यहाँ रहने का! इन्होंने तुम्हारी औरतो की इज्जत लूटी है। बच्चो के गले काटे हैं— आओ हम मिल-जुलकर आगे बढ़ें···मैं तुम्हारे साथ हूँ, तुम्हारा सेवक···(हाथ जोडता है)

मुस्लिम नेता मैं लोगो का दिल जीत लूंगा। जब उन्हे कर्फ्यू-पास दिलाऊँगा···

हिन्दू नेता राहत सामग्री बाँटूंगा।

मुस्लिम नेता · जमानतें कराऊँगा।

हिन्दू नेता मन्दिर बनवाने के लिए चन्दा जमा करूँगा।

मुस्लिम नेता मस्जिद की मरम्मत कराऊँगा।

हिन्दू नेता . हर-हर महादेव।

मुस्लिम नेता : अल्लाहो अकबर।

[एक मुल्ला और एक पडित भागते हुए मचस्थल पर आते हैं और हिन्दू नेता के चरणो मे पडित और मुसलमान नेता के चरणो मे मुल्ला बैठ जाते हैं और दोनो उन दोनो के पैर पकड लेते हैं।]

मुस्लिम नेता (मुल्ला जी से) मुल्ला जी, क्यो उदास हो?

मुल्ला : मस्जिद बनवाने के लिए चन्दा कम जमा होता है···मेरी साख गिर रही है।

हिन्दू नेता : (पडित से) क्या कष्ट है पडित जी?

पडित : दान-दक्षिणा, पूजा-पाठ, हवन आदि कोई नही कराता, बहुत विधर्म है।

हिन्दू-मुस्लिम नेता
एक साथ   दोनो खड़े हो जाओ। जैसा कहा जाए करो…पाँचो उंगलियाँ घी मे होगी, सिर कड़ाही मे होगा, टाँगें चूल्हे मे होगी।

[मुल्ला-पडित खड़े होकर ताली बजाते हैं और चारो नाचने लगते हैं।]

[मच पर दो बदमाश आते हैं और आते ही ठहाके लगाते हैं।]

बदमाश . पिटिर बोलकर ही काम नही चलेगा नेताओ देश के रक्षको'' आग तो हम ही लगायेंगे…गोलियाँ तो हम ही चलायेंगे' बच्चो की गर्दनें तो हम ही काटेंगे…औरतो की इज्जत तो हम ही लूटेंगे…उनकी छातियाँ तो हम ही काटेंगे…कभी वर्दी पहनकर कभी उतारकर हम ही आयेंगे…

हिन्दू नेता   आओ बहादुरो, तुम तो मेरा दाहिना हाथ हो।

मुस्लिम नेता   आओ बहादुरो, तुम तो मेरी आँखें हो।

[हाथ पकड़कर गोला बना लेते हैं और गाना गाते हुए सब नाचते हैं।]

समूह गान   सारे जहाँ से अच्छा
हिन्दोस्ताँ हमारा
हम बुलबुलें हैं इसकी
ये गुलिसिताँ हमारा
मजहब नही सिखाता
आपस मे बैर रखना
हिन्दी हैं हम वतन है
हिन्दोस्ताँ हमारा।

[गाना खत्म करके बदमाश मचस्थल के कोने पर रखी एक पोटली उठाकर क्रमश हिन्दू और मुसलमान नेताओ को देते हैं।]

मुस्लिम नेता : (मुल्ला जी से) मुल्ला जी, इसे लेकर मस्जिद मे डाल दो।

मुल्ला   क्या है इसमे…?

मुस्लिम नेता : क्या होगा ? बचपने वाली बातें करते हो, इसमे है सूअर का गोश्त।

[मुल्ला पोटली छोड देता है]

हिन्दू नेता : (पडित से) ये पोटली उठाओ···इसमे है गाय का गोश्त।

[पडित पोटली छोड देता है]

हिन्दू तथा मु० नेता अपनी-अपनी पोटलियाँ उठाओ · हिम्मत से काम दिखाओ ·· जाओ, मन्दिर मे गाय और मस्जिद मे सूअर पहुँचाओ।

[मचस्थल से सब निकल जाते हैं।]

[मचस्थल पर दो पोटलियाँ आकर गिरती हैं और एक तरफ से हिन्दू और दूसरी तरफ से मुसलमान आते हैं।]

हिन्दू हर-हर महादेव।

मुसलमान : अल्ला हो अकबर।

हिन्दू : हम तुम्हारा खून पी जाएँगे।

मुसलमान हम तुम्हे जहन्नुम पहुँचा देंगे।

[दोनो गिरोह और पास आते हैं, नारे और जोर से लगाते हैं और अपने-अपने हथियार सीधे कर लेते हैं। शोर बढता है। अचानक एक आदमी दोनो गुटो के बीच मे आ जाता है—चीखकर कहता है।]

आदमी ठहरो, रुको···बात सुनो···मैं जानता हूँ तुम लोग न हिन्दू हो न मुसलमान···तुम लडने का फैसला करके ही घर से निकले हो···लेकिन बताओ तो आखिर बात क्या है?

हिन्दू : मुसलमानो ने मन्दिर मे गाय का गोश्त फेंका है, ये देखो।

मुसलमान : हिन्दुओ ने मस्जिद मे सूअर का गोश्त फेंका है, ये देखो।

[आदमी झुककर दोनो पोटलियो को देखता है फिर खडा होकर।]

आदमी . भाइयो, ये सूअर और गाय का गोश्त नही है।

भीड़ : है-है···क्यो नही है···?

आदमी : नही, नही दोस्तो, मैंने दुनिया देखी है। क्या तुम समझते हो मैं गाय और सूअर के गोश्त को नही पहचानता···देखो अगर ये सूअर का गोश्त होता तो इसमे चर्बी होती···देखो चर्बी कहाँ है···अगर ये गाय का गोश्त होता तो लाल होता, रेशे होते···इसमे रेशे कहाँ हैं···नही-नही···ये गाय और सूअर का गोश्त तो हो ही नही सकता···धोखा हुआ है तुम लोगों को।

भीड़ : फिर ये किसका गोश्त है?

आदमी : सुनो...ये आदमी का गोश्त है।

भीड़ : आदमी का गोश्त है?

आदमी : (विश्वास से) हाँ, आदमी का गोश्त...[illegible]
ये तो आदमी का गोश्त है मेरे [illegible]

हिन्दू-मु० नेता : नहीं-नहीं...तुम झूठ बोल रहे हो।

आदमी : रंग और रंगत देखो...[illegible]
अलावा कुछ हो ही नहीं सकता।

कुछ आवाजें : (ठण्डेपन से) अच्छा, आदमी का गोश्त है।

एक आवाज : तब कोई बात नहीं।

दूसरी आवाज : मन्दिर अपवित्र नहीं हुआ।

तीसरी आवाज : मस्जिद नापाक नहीं हुई।

चौथी आवाज : चलो, अच्छा ही हुआ।

पांचवीं आवाज : धरम बच गया।

हिन्दू नेता : चलो हिन्दुत्व के रक्षको, [illegible]
है।

मुसलमान नेता : चलो इस्लाम के [illegible]
गोश्त है।

बदमाश : च च च आदमी का गोश्त

[पर्दा गिरता है]

न
के
गा
ार
बें
हैं।
पर
गया
हाथ
की,
याज
ा रहे
वख्शू

दीवार
उसके
न और
के लिए

न्धकार
देती है,
ही है।
ीं बस्ती
ो इतनी
ले बसते
र, घोड़-
क लोकल
काम देती
र इस पर

यों और
में भय्या
दुग्धालयों
इर्द-गिर्द

# तूफ़ान से पहले



उपेन्द्रनाथ अश्क

पात्र

| | |
|---|---|
| माँ | रामू |
| मुलिया | शिब्बू |
| पारो | बदरी |
| बख्शू | नियाज़ मियाँ |
| घीसू | हयात अल्लाह |
| गिरधारी दादा | |

दो शहरी हिन्दू, दो पठान और दूसरे भय्ये।

समय · सितम्बर, 1946।
वक्त शाम।

[पर्दा उठने पर ताड़ के पत्तो से छायी हुई एक झोपड़ी दिखायी देती है। झोपड़ी की दीवारें सरकण्डो की बनी हुई हैं, जिन्हें गोबर और मिट्टी से लीप कर इस योग्य बना लिया गया है कि वर्षा के पानी से झोपड़ी के वासियों का यथासम्भव शराबोर होने से बचा सकें।

झोपड़ी की छत इतनी नीची है कि झुके बिना इसके बरामदे अथवा अन्दर की कोठड़ी में प्रवेश करना असम्भव है। सड़क से देखने वाले को इस झोपड़ी की

कोठडियो के आधे किवाड ही दिखायी देते है, क्योकि शेष ढालुवी छत की ओट मे छिप जाते हैं। बरामदे के मध्य एक पुरानी सिंगर मशीन रखे घीसू कपडे सी रहा है। उसके आस-पास कपडे बिखरे पडे हैं। सामने दीवार के साथ एक साधारण-से अनघड रैंक पर कुछ किताबें और कपडो पर एक समाचार-पत्र के पृष्ठ भी पडे हैं। उसके बायें हाथ को, कोठडी के आगे, एक चौकी पर कत्था, चूना और मसाला सजाये, उसकी पत्नी मुलिया एक ग्राहक के लिए पान बना रही है। घीसू के दायें हाथ को एक झिलगा पडा है, जिसके पास घीसू की लडकी, पारो और बराबर की दरगाह के मुजाविर, नियाज़ मियाँ का किशोर बेटा बख्शू 'कटम कटउआ' खेल रहे हैं। पारो उठकर भागने की राह देख रही है और बख्शू इस ताक मे है कि वह उठे और वह छुए।

और भी दायी ओर को, बरामदे की दायी दीवार के साथ एक भैंस बँधी हुई जुगाली कर रही है। उसके पीछे, सामने की दीवार के दायें कोने मे एक और कोठडी है, जिसमे वर्षा के कारण भैंस की सानी के लिए भुस भरा रखा है।

मुलिया के पीछे जो कोठडी है, उसके अन्धकार मे, दरवाज़े के बराबर को, एक खाट दिखायी देती है, जिस पर मुलिया की बीमार सास पडी कराह रही है।

घीसू की झोपडी बम्बई की एक निकटवर्ती बस्ती मे सडक के किनारे बनी हुई है। यह सडक कुछ इतनी रौनक-भरी नही। इसके इर्द-गिर्द अधिकाश ग्वाले बसते हैं। दायीं ओर लोकल स्टेशन है और बायीं ओर, घोडु-बन्दर रोड के परे, शहरी बस्ती है और यह सडक लोकल स्टेशन और शहरी बस्ती के मध्य पुल का-सा काम देती है। इसीलिए लोकल ट्रेन के आने-जाने के समय इस पर कुछ रौनक हो जाती है।

घीसू की बस्ती मे यद्यपि दूसरी जातियो और व्यवसायो के लोग भी आबाद हैं तो भी इसमे भय्या लोगो का बाहुल्य है। ये भय्ये उन डेरियो, दुग्धालयो या तबेलो मे काम करते हैं, जो इस सडक के इर्द-गिर्द

बिखरे हुए हैं और जिनमे पलने वाली भैंसो के खुरो के कारण, वर्षा ऋतु म, सडक से आध-आध मील इधर-उधर टखनो तक बिना कीचड मे धँसे चलना-फिरना कठिन हो जाता है। इन डेरियो से अधिकाश गिरधारी दादा की हैं । दादा बम्बई की भाषा मे प्यार का नही, भय और त्रास का शब्द है और 'मवाली' अथवा 'गुण्डा' का पर्यायवाची है लेकिन गुण्डे या मवाली के साथ, जिस गरीबी और मरभुखेपन का ध्यान आ जाता है, उसका 'दादा' शब्द से अधिक सम्बन्ध नही ' क्योकि बम्बई मे लखपती 'दादा' भी हैं, जिनकी अरदल मे अन्य कई दादा उसी प्रकार तत्पर खडे रहते हैं, जिस प्रकार उस अन्तर्राष्ट्रीय दादा, हिटलर की अरदल मे गोरिंग और रिबन ट्राप—और जिस तरह उस दादा महान् से दूर-दूर रहने वाले भी डरते थे, उसी तरह यद्यपि गिरधारी दादा का साम्राज्य भी इस सडक और इसके इर्द-गिर्द फैली हुई डेरियो तक ही सीमित है, फिर भी घोड-बन्दर रोड मे परे बसने वाले धनी निर्धन सभी उससे खौफ खाते हैं और स्टेशन से आते-जाते समय उसे 'नमस्कार' करना अथवा एक विवश सी मुस्कान होठो पर लाकर, उसका हाल चाल पूछना आवश्यक समझते हैं।

रहे इन डेरियो मे काम करने वाले भय्ये तो वे दिन-रात गिरधारी दादा की उन्नति और उत्थान की गाडी मे बैला-सरीखे जुते रहते हैं । तवेलो की सफाई और पशुओ की रखवाली के साथ-साथ, इधर दोपहर और उधर आधी रात को उठकर दूध दोहने से लेकर, इधर प्रात और उधर सन्ध्या से पहले-पहले, 'ग्रेटर बम्बई' के विभिन्न स्टशनो तक उसे पहुँचाने का काम भी करते हैं । नीद आती है तो वही लोकल ट्रेन की खुर्री सीटो, प्लेटफार्मों या फुटपाथो पर ऊँघ लेते हैं । और भूख लगती है तो चन या दालसेव या 'खारी सीग' खाकर पेट की आग बुझा लेते हैं ।

गिरधारी दादा किस तरह इतने सम्पन्न हो गये, इसके सम्बन्ध मे कई किंवदन्तियाँ प्रसिद्ध हैं । (क्योकि

जब वे बम्बई आये थे तो उनकी जेब मे चने तक के लिए पैसे न थे) लेकिन सबसे प्रसिद्ध कहानी यह है कि पीर कलन्दर अली के आशीर्वाद से उन्होने यह सब धन-सम्पत्ति पायी है। इसीलिए पीर साहब की दरगाह, जो किसी समय एक टूटी हुई समाधि और एक जर्जर चबूतरे की सूरत मे थी, अब गिरधारी दादा की कृपा से पक्की बन चुकी है।

लेकिन यह तो उस समय की बात है, जब हिन्दू-मुसलमान एक-दूसरे के पवित्र स्थानो का आदर करते थे और एक-दूसरे के धार्मिक उत्सवो मे शामिल होना बुरा न समझते थे और गिरधारी दादा ने अपना जीवन इसी बस्ती के एक दुग्धालय मे, एक साधारण भय्ये के रूप मे शुरू किया था। अब तो दादा दरगाह की ओर देखना भी पाप समझते हैं और उसके वर्तमान मुजाविर, नियाज़ मियाँ की बढती हुई लोकप्रियता उनके लिए असह्य है और अपने साम्राज्य मे दरगाह का अस्तित्व उन्हे काँटे की तरह खटकता है।

पर्दा उठने के पल भर बाद बैकग्राउण्ड मे गाडी के आने की आवाज सुनायी देती है। घीसू के हाथ की गति भी तेज हो जाती है। मुलिया की चौकी के सामने जो व्यक्ति खडा है उसे शायद इसी गाडी पर सवार होना है, इसीलिए वह जल्दी मचाने लगता है।]

वह व्यक्ति : गाडी आ रही है मुलिया, जल्दी पान दो!

मुलिया : (जल्दी-जल्दी पान बनाकर देते हुए) लो!

[आदमी पान ले और पैसे फेंककर अन्धाधुन्ध भाग खडा होता है। गाडी के आने और घीसू की मशीन के चलने की आवाज़ें एक-दूसरे मे घुल मिल जाती हैं। इधर गाडी स्टशन पर रुकती है, उधर घीसू की मशीन खट से रुक जाती है। घीसू जल्दी-जल्दी हत्थी घुमाने का प्रयास करता है, किन्तु मशीन नही चलती। वह मशीन खोल-कर देखता है और खट्ट से बन्द करके माथे को ठोक-कर बैठ रहता है।]

खारी सीग उबली नमकीन मूँगफली।

मुलिया क्यो, क्या हुआ ?

घीसू (खीझकर) हुआ बुरे का सिर ।

[फिर उसी प्रकार उदास और निराश बैठ रहता है। उसकी माँ कराहना छोड देती है और अपनी चारपाई पर तनिक आगे को खिसक आती है ।]

माँ क्या हुआ बेटा ?

घीसू (कुछ सयत होकर) कुछ नही, माँ फिरकी टूट गयी ।

माँ तो ऐसे निराश क्या बैठ गये हो ? और ले आना ।

घीसू तुम भी अम्मा कौन लिये बैठा है मेरे लिए फिरकियाँ ?

[कुछ बेचैन होकर खाली मशीन ही चलाने लगता है। बैक ग्राउण्ड म गाडी के चलने की आवाज आती है सडक पर इक्का दुक्का आदमी गुजरने लगते हैं। तभी पारो उठकर भागती है कि बख्शू उसे छू लेता है।]

पारो (उसकी बारी देने को हाथ बढाते हुए) क्यो कितना दौडाया ?

बख्शू (उसके दोनो हाथ अपने हाथ म लेता हुआ) अब जरा मेरी बारी शुरू हुई है, देखना ।

[पारो के दोनो हाथ बाँधकर, उन्हे बायें से पकड, उसके उँगलियो के मध्य अपने दायें हाथ से आरी-सी चलाता हुआ बख्शू गाता है ]

कटम कटउआ
सागर दउआ
तू मेरी रानी
मैं तेरा नउआ
बैठे को छुएँ कि खडे को ?

पारो खडे को ।

[बख्शू झट उसके हाथ छोडकर बैठ जाता है। पारो जरा परे छूने को तैयार खडी रहती है। बख्शू दो चार बार उठन का भुलावा दकर एक बार जो भागता है तो झिलगे के कई चक्कर खाने पर भी पकडाई नही देता । पारो थककर रुक जाती है ।]

पारो · हम नही खेलते ।

[जाकर घीसू की गोद मे गिर जाती है। बच्छू उसे खीचता है।]

घीसू (दोनो को ढकेलकर) जाओ, उधर दरगाह मे खेलो और मुझे तंग न करो।

पारो : (नही जाती, वही चिमटी रहती है) बच्छू चुटकी काटता है बापू !

बच्छू : (उसे पूर्ववत् खीचता हुआ) मुझे इतना दौड़ाया और मेरी बारी आयी तो बापू की गोद में जा बैठी।

घीसू : (उसे और भी जोर से ढकेलकर) जा भाग ! मेरी जान न खा ! जा खेल उधर दरगाह मे जाकर।

[पारो पल भर के लिए अपने पिता के रुद्र रूप को देखती रहती है। फिर उसकी दृष्टि मूर्खों की तरह मुंह बाये खड़े बच्छू पर जाती है और एक चंचल मुस्कान उसके नयनो से निकल कर उसके सारे मुख को प्रदीप्त करती हुई बिखर जाती है। उछलकर वह बच्छू को छू लेती है और छू लिया ! छू लिया ! का शोर मचाती हुई भाग जाती है। बच्छू भी उसके पीछे भाग जाता है।]

घीसू : (बेज़ारी से मशीन परे हटाकर समाचार-पत्र उठाते हुए) कम्बख्त इस फिरकी को भी आज ही टूटना था। परसो गणेश-चतुर्थी है, गिरधारी दादा जान खा जाएँगे—पाँचों कुर्ते उनके सिलने वाले हैं।

मुलिया : तुम्हे तो गजट बाँचने की पड़ी है। जाकर बदल क्यो नही लाते फिरकी ?

घीसू : (समाचार-पत्र परे हटाकर) तेरा भेजा बराबर नही। फिरकी मिलती है चोर बाज़ार मे—और वहाँ आजकल हिन्दू को पा जायें को काटकर दस टुकड़े कर दें।

[रामू, एक तीस-बत्तीस वर्ष का हृष्ट-पुष्ट युवक, गले मे बण्डी, कन्धे पर अँगौछा और घुटनो तक ऊँची धोती कमर मे बाँधे स्टेशन की ओर से तेज़-तेज़ आता है। इकन्नी मुलिया के आगे फेंकता है और बात घीसू से करता है। मुलिया पान बनाने लगती है।]

रामू : सुना तैंने घीसू, मदनपुरे माँ आठ भइयन कर कतल करि डारा

लीगी मुसलमानन ने ।

मुलिया (पान लगाना छोडकर) अरे कहाँ ? कौन धनी के तबेला मा ?

रामू उसी पाजी खोजा के तबेला मा, और कहा ।

मुलिया सत्यानाश हो इन मूँडी काटे हत्यारो का । स्यामू और लकडिया

रामू · मारे गये दोनो, एक हरियै बचा, वह भी भीति फाँदि के, मुदा घायल वहू हुइ गवा ।

मुलिया बहुतेरा कहा था गिरधारी दादा ने कि मति जाव ह्या से छोडि के, पर उन्हे तो जियादा पगार का मोह था । बदी कौन टारे भइया ?

माँ (चारपाई पर कुछ और आगे को सरक कर) राम ! राम ! उन बेचारो ने किसी का क्या लिया था ? वे गरीब तो हिन्दू-मुसलमान दोनो को दूध पहुँचाते थे ।

घीसू (जिसके चेहरे पर और भी गहरा बादल छा जाता है) गरीब और भोले भाले ही तो मारे जाते है इस फिसाद मे अम्माँ ।

मुलिया ये हत्यारे मुसलमान भी ऐसे ही मारे जायँ तो इन्हे भी मालूम हो

घीसू वे भी मारे जाते हैं । इस फिसाद मे तो बेचारे ईसाई और पारसी भी मारे गये ।

[मुलिया पान लगाकर रामू को दे देती है । कुछ और लोग आ इकट्ठा होत हैं, जिनमे शिब्बू भी है—गिरधारी दादा का खास चेला ।]

शिब्बू : (मुलिया के सामने इकन्नी फेंकते हुए) उन मूर्खों से कहा था कि नौकरी छोड आओ । (मुलिया से) दो पान लगाओ, मुलिया !

रामू अचानकै तो भडकी आग दादा और फिर उस हरामी खाजे ने कहा, "तुम लोग ह्या रहो, फाटक बन्द रहेगा, कऊ तुम्हारा बार भी बाँका नाहिं करि सकित ।" मुदा पहले ही हल्ला मा खोल दिया किवाड कायर ने । बन्द तबेला, चाकू-छूरा से लैस इतने मुसलमान, और निहत्थे भइया ! अग-अग काटि के रख दिया निर्दइयन ने । मेरे तो हिरदे मे तभी से आग-सी लग रही है ।

शिब्बू भइया लोगो को इन पाजी मुसलमानो के तबेलो मे कभी नौकरी न करनी चाहिए ।

भीड़ में से एक : सभी उस कायर खोजे-से तो नही होते, दादा। उसी मदनपुरे में वह फ़ज़लू पंजाबी भी तो है। पूरे एक दर्जन भइया काम करते हैं उसके यहाँ। बार-बार गुण्डे दल-बल लेकर आये। धमकी दी कि फाटक न खुला तो हम आग लगा देंगे तबेले को—तलवार सूँतकर निकल आया वो पंजाबी, कि है किसी मर्द के बच्चे में हिम्मत तो बढ़े आगे। जान जोखिम में डाल दी, पर तबेले का फाटक नही खोला।

दूसरा : वह खुद दादा है मदनपुरे का। उसके तबेले को आग लगाते तो वह सबके घर न जला देता।

शिब्बू : पर आग में रहकर उसकी लपटों से कै दिन बचा जा सकता है, उनकी भी बारी आ जायेगी।

भीड़ में से तीसरा : भइयों को अपनी दलबन्दी करके अपनी रक्षा आप करनी चाहिए।

शिब्बू : निरी दलबन्दी ही नही। अपने भाइयों की हत्या का बदला लेना चाहिए।

[मुलिया पान लगाकर शिब्बू को देती है।]

रामू : भइया होत हैं जैसे बैल। चुपचाप अपनी राह चला जात है। किसी से मतलब नही राखत, मुदा कोई छेड़े तो सीग भोंकि देत है!

[पान की पीक सड़क पर थूकता है।]

शिब्बू : (पान का बीड़ा कल्ले में रखकर कन्धे पर रखे साफ़े से हाथ पोंछते हुए) सोये हुए सिंह को छेड़ा है इन मुसलमानों ने। आठों भइयों की हत्या का बदला जल्द ही लिया जायेगा।

[जोश से आगे-आगे चलता है।]

रामू : (उसके पीछे चलते हुए) लिया जायेगा और जरूर लिया जायेगा। दादा के पास चलो पहले, शिब्बू।

[सभी जोश से रामू और शिब्बू के पीछे-पीछे चलते हैं। घीसू लम्बी साँस भरकर फिर समाचार-पत्र खोल लेता है।]

मुलिया : (चिन्ता के स्वर में) न जाने इन लोगों के मन में क्या है? कहीं खून-खराबा न करें?

माँ : तू चोर—और बाजार न जाइयों, घीसू!

मुलिया : न जाने यह मारा-मारी कब बन्द होगी?

घीसू  जाने कभी बन्द भी होगी या नही ? पाच कुर्ते पड़े हैं और मशीन की फिरकी टूट गयी।

[फिर समाचार-पत्र पढ़ने का प्रयत्न करता है।]

माँ : (उठकर कराहती हुई उसके पास आ जाती है।) निरबल बिछिया सारे औगुन, कभी फिरकी टूट गयी, कभी हत्थी टूट गयी, कभी सुई टूट गयी—अब इस मशीन मे धरा ही क्या है ? पचीस-तीस बरस तो चल ली। यह अब बुढा गयी है, इसे छुट्टी दे ! गजट छोड, ला एक कुर्ता मुझे दे, मैं तुरपे देती हूँ।

घीसू : नही माँ, तुम आराम करो। अब तुम क्या आँखें फोडोगी ? कल सी लूँगा। जान तो लेगा नही गिरधारी दादा। इन्ही लोगो ने तो उठाया है यह सब फितना-फिसाद। (फिर जैसे अपने-आपसे) तबलीग, शुद्धि, दीवाली, मुहर्रम, गाय और बाजे का सवाल हटा तो साला यह भँडुओ का सवाल आ गया। इन लोगो को तो फिसाद कराने और अपना उल्लू सीधा करने का बहाना चाहिए ! न जाने इस देश के वासियो को कब समझ आयेगी। अरे भई, एक-दूसरे को बुरे लगते हैं तो न लगाओ झण्डे !

[बदरी प्रवेश करता है। लम्बा-तगडा युवक है। एक दफ्तर मे क्लर्क है। राष्ट्र-सघ का सदस्य और भडकीले स्वभाव का—प्रातः साय लाठी चलाना सिखाता है।]

बदरी  (भुलिया से) पूना काला सादा ! (फिर घीसू की झोपडी पर एक दृष्टि डालकर, उसे सम्बोधित करते हुए) क्यो जी घीसू, यह क्या हरकत है ? तिरगा नही लगाया तूने ?

घीसू  जिन लगाया है, उन कौन तीर मार लिया है, बदरी भइया ?

बदरी  इसमे तीर मारने की कौन बात है ? अपना राज हुआ है तो क्या खुशी न मनायें ? इन साले मुसलमानो ने काले झण्डे लगाये हैं, तो हम तिरगे न फहरायें ?

घीसू : फहराइए, सिर फोडिए-फोडवाइए !

बदरी : सिर फुटौव्वल के डर से हम अपना अधिकार तो नही छोड देंगे ?

घीसू : (पूर्ववत् समाचार-पत्र पर दृष्टि जमाये हुए) अधिकार हमारा कौन लिये जाता है बदरी भइया। हम झण्डे न लगायेंगे तो क्या हमारी बनी सरकार टूट जायेगी ?

बदरी : इन लीगियों ने काले झण्डे लगाये हैं···

घीसू उन्हे दुख है तो आप उन्हें चिढायें क्यो ? भरा आकाश ही नीचा होता है भइया। आपको राज मिला है, आप ही को नमना चाहिए।

[मुलिया पान बढाती है।]

बदरी तुम्हारी तो मति मारी गयी है। (पान लेकर पैसे फेकता है और पान कल्ले मे रखता है) चार भाई जब आकर यहाँ झण्डा लगायेंगे तो देखूँगा तुम क्या कर लेते हो ?

[टेढ़ी नज़रो से उसकी ओर देखता हुआ चला जाता है।]

मुलिया मति तो नही मारी गयी तुम्हारी ? जल मे रहे क्या, और मगर ते बैर क्या ? जब वे कहते हैं तो लगा काहे नही लेते झण्डा ? पहले तो बात-बात मे लगाते थे तिरगा।

घीसू . मति तुम्हारी मारी गयी है। झण्डा लगाने मे मुझे क्या एतराज़ ह। सकता है ! पर मुसलमान इससे चिढते हैं।

मुलिया झण्डा मुसलमानो का भी तो है। तुम्ही कहते थे कि इसमे हरा रग उनका है।

घीसू वह तो है। पर बहुत से मुसलमान नही मानते। वे इस जीत को अपनी हार समझते हैं। उनके लीडर अण्ट-सण्ट भाषण देते हैं। भडके हुए तो वे हैं ही, मैंने यहाँ तिरगा लगाया और बराबर की दरगाह मे किसी ने चिढकर काला झण्डा लहरा दिया तो ? भइ५। के तेवर तो तुमने देखे ही हैं, खून हो जायेंगे यही।

मुलिया : हो जायें। इन मुसलमानो को भी पता चले कि भइयो का लहू इतना सस्ता नही।

[घीसू समाचार-पत्र फेंककर क्रोध-भरी दृष्टि से मुलिया की ओर देखता है और भरे हुए गले से चिल्लाता है ]

घीसू : मुलिया !

[स्टेशन की ओर से नियाज़ मियाँ दो पठानो को साथ लिये आते हैं। घीसू उनका अभिवादन करता है :]

—आइए, आइए, नियाज़ मियाँ ! (चारपाई घसीटकर उनके आगे करते हुए) कहिए, किधर से आ रहे हैं ?

नियाज़ मियाँ · शहर से आ रहा हूँ, भाई ! (साथी पठान युवको की ओर इशारा करते हुए) इन बच्चो को लेने गया था।

घीसू . क्या हाल-चाल है शहर का

घीसू जाने कभी बन्द भी होगी या नही ? पाच कुर्ते पड़े हैं और मशीन की फिरकी टूट गयी।

[फिर समाचार-पत्र पढ़ने का प्रयत्न करता है।]

माँ : (उठकर कराहती हुई उसके पास आ जाती है।) निरबल बिछिया सारे औगुन, कभी फिरकी टूट गयी, कभी हत्थी टूट गयी, कभी सुई टूट गयी—अब इस मशीन में धरा ही क्या है? पचीस-तीस बरस तो चल ली। यह अब बुढा गयी है, इसे छुट्टी दे! गजट छोड, ला एक कुर्ता मुझे दे, मैं तुरपे देती हूँ।

घीसू नही माँ, तुम आराम करो। अब तुम क्या आँखें फोडोगी? कल सी लूंगा। जान तो लेगा नही गिरधारी दादा। इन्ही लोगो ने तो उठाया है यह सब फितना फिसाद। (फिर जैसे अपने आपसे) तबलीग, शुद्धि, दीवाली, मुहर्रम, गाय और बाजे का सवाल हटा तो साला यह भँडुओ का सवाल आ गया। इन लोगो को तो फिसाद कराने और अपना उल्लू सीधा करने का बहाना चाहिए! न जाने इस देश के वासियो को कब समझ आयेगी। अरे भई, एक-दूसरे को बुरे लगते हैं तो न लगाओ झण्डे!

[बदरी प्रवेश करता है। लम्बा-तगडा युवक है। एक दफ्तर मे क्लर्क है। राष्ट्र-सघ का सदस्य और भडकीले स्वभाव का—प्रात साय लाठी चलाना सिखाता है।]

बदरी (मुलिया से) पूना काला सादा! (फिर घीसू की झोपडी पर एक दृष्टि डालकर, उसे सम्बोधित करते हुए) क्यो जी घीसू, यह क्या हरकत है? तिरगा नही लगाया तूने?

घीसू जिन लगाया है, उन कौन तीर मार लिया है, बदरी भइया?

बदरी इसमे तीर मारने की कौन बात है? अपना राज हुआ है तो क्या खुशी न मनायें? इन साले मुसलमानो ने काले झण्डे लगाये हैं, तो हम तिरगे न फहरायें?

घीसू फहराइए, सिर फोडिए-फोडवाइए!

बदरी सिर फुटौव्वल के डर से हम अपना अधिकार तो नही छोड देंगे?

घीसू (पूर्ववत् समाचार-पत्र पर दृष्टि जमाये हुए) अधिकार हमारा कौन लिये जाता है बदरी भइया। हम झण्डे न लगायेंगे तो क्या हमारी बनी सरकार टूट जायेगी?

बदरी इन लीगियों ने काले झण्डे लगाये हैं…

घीसू : उन्हे दुख है तो आप उन्हें चिढायें क्यो ? भरा आकाश ही नीचा होता है भइया। आपको राज मिला है, आप ही को नमना चाहिए।

[मुलिया पान बढाती है।]

बदरी : तुम्हारी तो मति मारी गयी है। (पान लेकर पैसे फेंकता है और पान कल्ले मे रखता है) चार भाई जब आकर यहाँ झण्डा लगायेंगे तो देखूँगा तुम क्या कर लेते हो ?

[टेढी नजरो से उसकी ओर देखता हुआ चला जाता है।]

मुलिया : मति तो नही मारी गयी तुम्हारी ? जल मे रहे क्या, और मगर ते बैर क्या ? जब वे कहते हैं तो लगा काहे नही लेते झण्डा ? पहले तो बात-बात मे लगाते थे तिरगा।

घीसू : मति तुम्हारी मारी गयी है। झण्डा लगाने मे मुझे क्या एतराज़ ह। सकता है ! पर मुसलमान इससे चिढ़ते हैं।

मुलिया . झण्डा मुसलमानो का भी तो है। तुम्ही कहते थे कि इसमे हरा रग उनका है।

घीसू : वह तो है। पर बहुत से मुसलमान नही मानते। वे इस जीत को अपनी हार समझते हैं। उनके लीडर अण्ट-सण्ट भाषण देते हैं। भड़के हुए तो वे हैं ही, मैंने यहाँ तिरंगा लगाया और बराबर की दरगाह मे किसी ने चिढकर काला झण्डा लहरा दिया तो ? भइ५। के तेवर तो तुमने देखे ही हैं, खून हो जायेंगे यही।

मुलिया : हो जायें। इन मुसलमानों को भी पता चले कि भइयो का लहू इतना सस्ता नही।

[घीसू समाचार-पत्र फेंककर क्रोध-भरी दृष्टि से मुलिया की ओर देखता है और भरे हुए गले से चिल्लाता है:]

घीसू : मुलिया !

[स्टेशन की ओर से नियाज़ मियाँ दो पठानो को साथ लिये आते हैं। घीसू उनका अभिवादन करता है:]

—आइए, आइए, नियाज़ मियाँ ! (चारपाई घसीटकर उनके आगे करते हुए) कहिए, किधर से आ रहे हैं ?

नियाज मियाँ : शहर से आ रहा हूँ, भाई ! (साथी पठान युवकों की ओर इशारा करते हुए) इन बच्चो को लेने गया था।

घीसू : क्या हाल-चाल है शहर का ?

नियाज़ मियाँ अरे भाई, क्या हाल-चाल पूछते हो? तुमसे क्या छिपा है? सभी कुछ तो आ जाता है अखबारों मे। भाई को भाई काट रहा है। फिसाद तो हिन्दू-मुसलमानो मे पहले भी हुए, लेकिन ऐसा भयानक और खूनी फिसाद पहले कभी नही हुआ। (क्षण-भर खाँसते हैं) कलकत्ते का हाल तो तुमने पढा ही होगा। नन्हे मासूम बच्चो के सीने मे छुरे भोंके गये। औरतो की छातियाँ काटी गयी। बेकसूर बच्चे-बूढो को चार-चार मजिले मकानो से नीचे फेंका गया, जिन्दा जलाया गया।

घीसू कलकत्ते मे जो हुआ, वही बम्बई मे भी हो रहा है।

नियाज़ मियाँ (एक पठान युवक की ओर सकेत करते हुए) इस रमजू का बूढा बाप वहाँ गिरगाम मे एक सेठ के यहाँ चौकीदार था, छुट्टी पर गया हुआ था। लौटने पर उसे तो मालूम था नही कि यहाँ भाई-भाई के लहू का प्यासा है। वह सीधा चला अपने सेठ के यहाँ। रास्ते मे पत्थर मार-मारकर मार डाला जालिमो ने। इससे भी जी न भरा तो छुरो से उसकी तडपती लाश को जख्मी किया और दुख इस बात का है कि औरतें और बच्चे अपनी खिडकियो से देखते थे और खुश होते थे।

घीसू : (लम्बी साँस भरता है) भोले-भाले लोगो के दिलो मे ज़हर भर दिया गया है, नियाज़ मियाँ!

नियाज़ मियाँ : ये लोग नही जानते कि किसी जगह एक हिन्दू मारा जाता है तो दूसरी जगह एक मुसलमान की कब्र तैयार होती है। अगर किसी जगह एक मुसलमान के छुरा भोका जाता है तो दूसरी जगह एक हिन्दू खजर का शिकार होता है। ये लोग क्यो नहीं समझते? सरकार क्यो कुछ नहीं करती? लीडर क्यो कुछ नही करते?

घीसू . सरकार यही चाहती है और लीडर बिल्ली को देखकर भी कबूतर की तरह आँखें बन्द किये हुए हैं। यह सब तो होगा ही।

नियाज़ मियाँ सरकार का क्या जाता है? भुस मे चिनगारी डालकर जमालो तो अलग खडी है! लीडरो का भी क्या जाता है? अपने दीवानखानों मे आराम से बैठे, भडकीले बयान झाड देते हैं। उनका आराम और उनकी लीडरी कायम रहे, मौत तो हम गरीबों की है।

घीसू . सारे देश की बदकिस्मती है, बाबा! आजादी की साँस ली नहीं

कि भाई को भाई काटने लगा।

नियाज़ मियाँ : (लम्बी साँस भरकर माथे को ठोंकते हुए) न जाने खुदा को क्या मंजूर है ? मैं तो इन बच्चों को ले आया। इस खूनी फिसाद मे कम्बख्ती तो इन लोगो की है। बेचारे चौकीदारी करते हैं—हिन्दू के घर की भी, मुसलमान के घर की भी। आम मुसलमान तो पतलून-कोट पहनकर बच जाते हैं। यह पठान बच्चे तो छिप नही सकते, मारे जाते हैं।

घीसू : यही हाल हिन्दुओ मे भैंइयों का है। आज ही मदनपुर मे आठ भैंइयो की हत्या कर दी वहाँ के मुसलमानो ने।

नियाज़ मियाँ दूधवाले, फेरीवाले, चौकीदार, डाकिये, भोले-भाले राही—यही लोग तो मारे जा रहे हैं इन फिसादो में।

[उठकर चलने लगते हैं।]

घीसू (उनके कन्धे पर हाथ रखकर उन्हे रोकते हुए) नियाज़ मियाँ !

[नियाज़ मियाँ रुक जाते हैं। धीमे स्वर मे घीसू कहता है ]

. मैं कहता था, तुम न दरगाह पर काला झण्डा लगाना बाबा, मदनपुरे मे जो भैंइये मरे हैं, उनमे हमारे श्यामू और लकड़िया भी थे।

नियाज़ मियाँ : इन्ना लिल्लाहे व इन्ना इलैहे राजऊन ! (लम्बी साँस भरकर) न जाने इस दुनिया का क्या होनेवाला है ?

घीसू : यहाँ के लोग भी कुछ बिफरे हुए हैं बाबा, इसलिए मैंने कहा था कि काला झण्डा···

नियाज़ मियाँ : नही भाई, हमे क्या लेना है इन काले-सफेद झण्डो से ! कलन्दर साईं इन्सान-इन्सान को बराबर समझते थे। उनकी दरगाह पर हिन्दू क्या, मुसलमान क्या, सभी आते हैं, और मन की मुरादें पाते हैं।

घीसू . वह जरा हयात का डर था···

नियाज़ मियाँ : जवान लडका है, भडकीली तबीयत का, और अक्ल नाम को नही, लेकिन तुम फिक्र न करो, मैं आज ही उसे उसकी ननिहाल भेज दूँगा।

[चलते हैं।]

घीसू : (फिर रोककर) नियाज़ मियाँ···

[नियाज़ मियाँ फिर रुकते हैं।]

: (समीप आकर प्रेम-भरे विनीत स्वर में) नियाज मियाँ, मेरा कहा मानो तो तुम कुछ दिन के लिए कही चले जाओ, बाबा। गिरधारी दादा आजकल बड़े बगुला भगत बने हुए हैं। म्यूनिसिपैलिटी के लिए खड़े होने जा रहे हैं अगली बार, सब जगह बरबस झण्डे लगा दिये हैं उन्होंने। हालांकि स्वयं महात्मा गाधी ने कहा है कि मुसलमान चिढ़ते हो तो न लगाओ तिरगे, पर इस समय उनकी कौन सुनता है? ये सब तिरंगे देखकर किसी मुसलमान को जोश आ गया और उसने दरगाह पर काला झण्डा···

नियाज मियाँ तुम चिन्ता न करो, घीसू। कलन्दर साईं की दरगाह किसी पार्टी का अखाड़ा नही बन सकती। हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई —सबके लिए वह खुली है—इस पर कलन्दर साईं का ही झण्डा झूलेगा। किसी जात, बिरादरी, पार्टी या कौम का नहीं। इस बस्ती के हिन्दू तो हमे अपने भाइयो से भी बढ़कर समझते रहे हैं।

[चले जाते हैं।]

घीसू : (वापस आकर अपनी जगह बैठते हुए, जैसे अपने आपसे) लेकिन इस खून-खराबा मे तो भाई ही भाई का गला काट रहा है। कौन यह पूछता है कि तुम किस पार्टी मे से हो? बस, चुटिया, धोती, दाढ़ी या अचकन देखकर छुरा भोंक देते हैं।

[आकर फिर कुर्ता उठाता है, किन्तु फिर उसे रखकर समाचार-पत्र हाथ मे लेता है। पर कुर्ते सीने अथवा पत्र पढने मे उसका मन नही लगता। उठता है, जाकर भैंस की पीठ पर प्यार से हाथ फेरता है, भैंस फुरेरी लेती है और कीचड मे लिथड़ी हुई दुम घुमाती है। दूसरे क्षण घीसू की कनपटी से लेकर गरदन तक उस कीचड़ का निशान बन जाता है।]

: (फिर भैंस की पीठ पर प्यार से हाथ फेरकर, दर्दभरी मुस्कान से) तुझमे और इन लोगो मे कोई अतर नही! अपने भला चाहने वाले को ये बुरा समझते हैं।

[दूर गाडी के आने की आवाज़ आती है। दरगाह की ओर से, अर्थात स्टेशन की भिन्न दिशा से, एक भैइया

भागा आता है और दो पैसे मुलिया के सामने फेंकता है।]

भैइया तनिक जल्दी मुलिया!

[मुलिया जल्दी जल्दी पान लगाती है।]

(घीसू से) यह तुम क्या मूरखताई कर रहे हो घीसू, झण्डा काहे नही लगाते? दादा बडे गुस्सा रहे हैं। सभा हो रही है उनके आँगन मा। गिरगाँव से उनकी मण्डली भी आयी हुई है। श्यामू और लकडिया की हत्या न हिला डाला है दादा को। तुम्हे बुलाया है उन्होंने सभा मा।

घीसू मुझे नही जाना है उस सभा मे।

भैइया तुम जानो, मुदा हम कहे देते हैं, गुस्सा बहुत खराब है दादा का।

[मुलिया पान लगाकर देती है। उसे कल्ले मे रखता हुआ वह भाग जाता है।]

घीसू (कुर्ते से कनपटी का झाग पोछते हुए) दादा और उनकी मण्डली न जाने ससार म इन दादाओ का कब अन्त होगा!

[फिर जाकर कुर्ते सीने का प्रयास करता है, पर काम मे उसका मन नही लगता। माँ बराबर कुर्ते सीती रहती है। एक कुर्ता उठाकर मुलिया को देती है।]

माँ मुलिया ले, घीसू के तो पैर नही टिकते। एक तू सी दे। दादा सिर हो जायेगा। (घीसू से) देख बेटा, दादा जो कहित हैं कर ले। उनसे बैर मोल लेकर हम ह्याँ कितने दिन रहि सकित हैं? झण्डा लगाय ते जो कोई हमे मारने आयेगा तो दादा के ह्याँ रहते, क्या वह बचकर जायेगा?

घीसू तुम तो पागल हो। हमे कोई क्या मारेगा? पर ये सब झण्डे लगाकर जो इन लोगो को चिढाया जा रहा है, इससे फिसाद तो हो सकता है। हम न मरें, कोई और मरेगा। मैं इस हत्या-काण्ड म भाग नही ले सकता।

[समाचार-पत्र उठा लेता है और बरामदे के स्तम्भ से पीठ लगाकर पढने लगता है।]

मुलिया सारा दिन यह गजट बाँचते हो और अपना से बैर बाँधते हो! दादा की डेरियो म काम करने वाले भैइया के बारे मे इस गजट मे जो उल्टी-सीधी बातें छपी हैं, जानते हो दादा ने उनका

निर्दोष मौत के घाट उतर गये और बम्बई मे उतर रहे हैं। ये गोरी सरकार के गुर्गे हैं, गुर्गे !

दूसरा : वे लोग काग्रेसियो पर यही इलजाम लगाते हैं ?

[मुलिया पान बनाकर देती है। पहला कल्ले मे रखता है।]

घीसू (समाचार पढते हुए जैसे अपने आप से) दोनो गोरी सरकार के हाथ मे खेल रहे हैं।

पहला (पान चबाते और सिगरेट होठो के कोने मे रखते हुए) अग्रेज़ो की तो छाया से दूर भागते हैं और निहत्थे हिन्दुओ की पीठ मे छुरे भोकते हैं, यह आज कालबादेवी मे क्या हुआ ? टैक्सी मे मशीनगन रखकर बेगुनाह लोगो पर गोली चलाते गये ! वह दस बरस की लडकी, वह क्या काग्रेस मे थी ? और वे हिन्दू जुलाहे, जिन्हें हिटलरी बर्बरता से इन कसाइयो ने उनकी झोपडियो मे ज़िन्दा जला डाला, जिनके भागते हुए बच्चो को लाठियाँ मार-मारकर फिर आग मे झोक दिया, क्या वे काग्रेसी थे ? पिछले फिसादो के भूले हुए हैं ये मुसलमान, समझते हैं, गाजर-मूली की तरह हिन्दुओ को काट देंगे ! लेकिन मै बता दूँ—हिन्दुओ ने भी अपना सगठन कर लिया है। छ बरस से हमारा राष्ट्र सघ हमे इन कसाइयो के हाथो से अपनी माँओ-बहनो की इज्जत बचाना सिखा रहा है। अब यदि एक हिन्दू के छुरा लगा तो दस मुसलमानो के छुरे भोके जाएंगे, एक हिन्दू बच्चा मारा गया तो दस मुसलमान-बच्चे मौत के घाट उतारे जाएँगे, एक हिन्दू देवी का अपमान हुआ तो दस मुसलमान औरतो की बेइज्जती की जायेगी।

[मुलिया दूसरे को भी पान-सिगरेट देती है और दोनो जोश से बातें करते चले जाते हैं।]

घीसू हिंसा "हिंसा" हिंसा"'इन सबके सिर पर यह कैसी हिंसा सवार है ! इन्हे कौन बताये कि यह हिंसा तो अपना ही गला काटने के बराबर है ? मुसलमान बच्चो की हत्या क्या अपने बच्चो की हत्या नही ? मुसलमान औरतो का अपमान क्या अपनी माँ-बहनो का अपमान नही ?

माँ . (कराहती हुई उठती है) मैं कहती हूँ, घीसू थोडे दिन को अपने

गाँव क्यो न चले जायँ ? ह्याँ तो जिसे देखो उसके सिर पर खून सवार है !

[कराहती हुई फिर जाकर चारपाई पर लेट जाती है ।]

मुलिया  पारो के बापू, हम तो इसी घडी ह्याँ से चल देंगे ।

घीसू  कहाँ चल देंगे ?

मुलिया  अपने गाँव, और कहाँ ?

घीसू  वहाँ क्या मुसलमान नही या ऐसे हिन्दू नही ? देश मे ऐसा कौन-सा गाँव है, जहाँ हिन्दुओ के साथ मुसलमान या मुसलमानो के साथ हिन्दू नही वसते ? आग जो नगरो मे लगी है, उसकी लपटे क्या देहात मे न पहुँचेगी ? (फिर जैसे अपने आप से) छ बरस लडाई रही । नगर तो दूर, किसी गाँव तक मे फिसाद नही हुआ । अब महामारी की तरह यह मारा मारी शहर-शहर क्यो फैल गयी ? ब्रिटिश सरकार जब चाहती है कि भाई से भाई लडे और उसकी सेना के पाँव हिन्दुस्तान मे जमे रहे तो क्यो न यह सब खून-खराबी होगी ? (फिर मुलिया से) भागकर इससे जान न बचेगी, मुलिया !

मुलिया : तुमसे कौन माथा फोडेगा । दो अच्छर क्या पढ गये हो, गाधी बाबा के कान काटते हो ! बस तुम्ही एक जान-पाण्डे हो, बाकी सब नेता तो जानो मूरख हैं ! तुम रहो ह्याँ । मैं तो अपनी बच्ची को लेकर आज ही चली जाऊँगी ।

[पारो भागी भागी आती है ।]

पारो  बापू…बापू…हमे एक काला पटुका दो…

मुलिया  काला पटुका… काला पटुका क्या करेगी रे…

पारो  हम भी काला झण्डा लगायेंगे । बच्चू लगा रहा है काला झण्डा अपने घरे माँ ।

घीसू  धत् पगली…चल बैठ उधर !

[पारो अनमनी-सी जाकर दीवार के साथ बैठ जाती है । फिर अवसर देखकर भाग जाती है । मुलिया लालटेन ला, उसे जलाकर लटका देती है । पोखर रोड की ओर से कुछ लोग बातें करते आते हैं । जिम्मू उन सबसे आगे है ।]

जिम्मू  यह भैया लोगों का गुन है, भाई ! तब चौंकते हैं, जब पानी

सिर से गुजर जाता है। अपने गिरधारी दादा और उनकी यह गिरगाँव की मण्डली जो कुछ आज कर रही है, यदि कुछ दिन पहले करती और नियाज मियाँ और उसके उस सिर फिरे बेटे को बुलाकर डाँट देती तो कभी इसकी नौबत भी न आती।

[घीसू के बरामदे से झिलगा घसीटकर उस पर बैठ जाता है, शेष कुछ लोग उसके इर्द-गिर्द बैठ जाते हैं और कुछ खडे रहते हैं।]

आज भी बुलाकर यह फैसला कर लिया तो अच्छा रहा·· आप लोग और दो दिन चुप रहते तो किसी दिन देखते कि झोपडियाँ जली पडी हैं। और आपके बीबी-बच्चे छुरो से घायल तडप रहे हैं। बडे ज़ालिम और कायर हैं ये लोग, भैइया!

**दूसरा** कुछ भी हो हम नियाज मियाँ को ऐसा न समझते थे।

**तीसरा** अरे, वह एक ही हरामी है! दो पठान वह आज भी लाया है। मैंने इन अपनी आँखो से देखे हैं।

**चौथा** और वह हयातू···वह उसका सिर-फिरा बेटा, कल मेरे सामने उसने हाथ भर का छुरा खरीदा। मैंने पूछा—"क्या करोगे इतना बडा छुरा खरीदकर? सरकार पकड लेगी!" कहने लगा "बकरे जिबह करूँगा और काफिरो की इस सरकार की ऐसी की तैसी?"

**शिब्बू** (क्रोध मे एक हुकार भरकर) हूँ! तो वह हमको बकरा समझ रहा है! लेकिन बेटा को पता चल जायेगा कि बकरे सिंह भी बन जाया करते हैं! वह करे पठान इकट्ठे ·

**घीसू** (जो इस बीच मे बराबर आगे बढकर कुछ कहने का प्रयास करता है) अरे भाई, वे पठान तो चौकीदार हैं। उधर से डर-कर इधर आ गये हैं।

**पहला** जी हाँ, चौकीदार हैं! जब यहाँ तुम्हारा और तुम्हारे बीबी-बच्चो का गला काटेंगे तब पता चलेगा··

**पाँचवाँ** (जो इस बीच मे बराबर सडक पर खडा देख रहा था) अरे, वह देखो, हयातू दरगाह पर काला झण्डा लगा रहा है!

**शिब्बू** (जैसे रबड के तार के खिंचाव से उचककर झिलगे से सडक पर जा खडा होता है) मैं न कहता था··और उधर दादा··· सारी आबादी इकट्ठी कर लाये हैं!

[सभी उछलकर सडक पर आ खडे···

है किसी में हिम्मत कि गिरधारी दादा आज्ञा दें और वह इनकार कर दे! दादाओं के दादा हैं अपने गिरधारी दादा! हर-हर महादेव!

[सामने से भी 'हर-हर महादेव!' का शोर होता है, जो क्षण प्रति क्षण समीप आता जाता है।]

इस हमाकू के बच्चे को भी मालूम होगा कि हिन्दू बकरे ही नहीं जो हर फिसाद में जिबह किये जायें। वे भी सिंह बन सकते हैं।

**घीसू** इस समय तो दोनों गीदड हैं।

[लेकिन कोई उसकी बात नहीं सुनता। पहला जोश से 'हर-हर महादेव!' का जयकारा बुलाता हुआ आगे बढ़ता है। शेष उसका अनुकरण करते हुए उसके पीछे जाते हैं। घीसू सडक में आ खडा होता है।]

(निमिष भर के लिए सडक मे खडा देखता रहता है) अरे ये लोग दरगाह को आग लगाना चाहते हैं। नियाज मियाँ बेचारे···

[समाचार-पत्र बरामदे मे फेंककर भागता है।]

**मुलिया** (अपनी चौकी से छलाँग लगाकर सडक पर आ जाती है।) तुम पराये के फटे मे क्या पैर डारित हो? मरने दो इन पापियो को।

[उसके पीछे जाती है।]

**माँ** (उसके पीछे जाती हुई) बेटा बेटा · बहू·· बहू· ! बहू!

[इसके बाद कुछ क्षण तक बैक-ग्राउण्ड मे प्रतिहिंसा से पागल भीड के नारो, जयकारो, मारपीट और गाली-गलौज का शोर मचा रहता है। स्टेशन पर गाडी आकर रुकती है। उधर से भी लोग आते हैं। नियाज मियाँ के साथ का एक पठान युवक अपनी जान के भय से अन्धाधुन्ध भागा आता है और उसके पीछे हिंसक भेडियो की तरह लाठियाँ, चाकू और छुरे लिये कुछ भैया और दूसरे लोग भागे जाते हैं।

सहमे और डरे हुए पारो और बच्चू आते हैं और भुस की कोठडी मे जा छिपते हैं, या यो कहिए कि पारो बच्चू

को छिपा देती है। तभी दरगाह की ओर से लाठी चलने की आवाज़ आती है। अपन पीछे नियाज मियाँ को लिये हुए लोहू मे लथपथ, घायल घीसू लाठी से आक्रमण करने वालो के वार बचाता और पीछे हटता हुआ प्रवेश करता है। रसमू, बदरी और शिब्बू आक्रमणकारियो के आगे-आते हैं। साथ-साथ सहमी, डरी, रोती मुलिया भी है। रामू के भरपूर वार से घीसू की लाठी गिर जाती है और वह नियाज मियाँ को झोपडी के स्तम्भ और अपने मध्य लेकर सबके सामने छाती तानकर खडा हो जाता है।]

**रामू** क्यो अपनी मौत बुलाते हो घीसू? छोडो इस मलेच्छ को! जहाँ इसके साथी गये हैं, उहाँ इसे भी जाने देओ!

**घीसू** तुम लोग नही जानते तुम क्या कर रहे हो?

**शिब्बू** (उछलकर आगे बढते हुए) हम अच्छी तरह जानते हैं, हम क्या कर रहे हैं!

**बदरी** इनके लिए हम काफिर हैं और हमे मारना इनके मजहब मे सवाब है। इनके लीडर काफिरो को मारने की तबलीग करते हैं और काफिरो को मारने वाले गुण्डो को शहीदो का दर्जा देते हैं। हमारे लिए भी ये मलेच्छ हैं और इन्हे यम के घर पहुँचाना महापुण्य है।

**घीसू** कोई काफिर नही, कोई मलेच्छ नही। सब इन्सान हैं। सब भाई-भाई हैं!

**नियाज मियाँ** इस बूढे के लिए क्यो मरते हो घीसू? तुम इन्हे अपनी प्यास बुझाने दो। मैं अब जीकर करूँगा भी क्या? हयात की मौत के बाद·

**घीसू** (नियाज मियाँ की बात का उत्तर न दकर पूर्ववत रामू और बदरी से) इस बुड्ढे न तुम्हारा क्या बिगाडा है?

**बदरी** भिण्डी बाज़ार के अनगिनत बच्चे-बूढो ने मुसलमानो का क्या बिगाडा था?

**नियाज मियाँ** मुसलमानो के इलाको मे हिन्दुओ के साथ यही हो रहा है। अपने गुनाहो का फल हमे भोगना होगा। तुम क्यों नाहक अपनी जान देते हो, घीसू?

**रामू** तुम हट जाव घीसू, नही तो···

**घीसू** (सीना तानकर) तुम नियाज मियाँ को कत्ल करना चाहते हो। तुम नही जानते कि सन बाइस के फ़िसाद मे इसी फ़क़ीर ने एक

काफिर के बच्चे को मुसलमानों के पंजो से बचाया, पाला-पोसा और परवान चढ़ाया और यह काफिर तुम्हारे सामने खड़ा है! उसकी लाश से गुजरकर ही तुम इसको ले जा सकोगे!

[उसी क्षण गिरधारी दादा का फेंका हुआ छुरा घीसू के सीने में आ लगता है और घीसू आधा सड़क और आधा बरामदे में गिरता है। मुलिया चीख मारकर उस पर आ गिरती है। दूसरे क्षण गिरधारी दादा सामने आता है। नियाज़ मियाँ को घसीटकर अपने साथी को देता है और पल भर बाद बैक-ग्राउण्ड में नियाज़ मियाँ के गिरने के साथ उनकी आवाज—"खुदा तुम्हे नेक हिदायत दे!" "वायुमण्डल मे गूँज जाती है।]

गिरधारी (अचेत घीसू की ओर देखते हुए) लातो के भूत बातो से भी माना करते हैं? इतने जने मुँह बाये तक रहे थे और यह पटर-पटर बके जा रहा था! (नेपथ्य की ओर देखकर) क्यो, कर दिया सफाया उन सब पाजियो का?

[सभी जाते हैं। गिरधारी दादा एक ठोकर घीसू के लगाता है।]

बड़ा हिमायती बना फिरता था नियाज़ मियाँ का! देख लिया मजा गिरधारी दादा से बैर मोल लेने का?

[उपेक्षा से घीसू की ओर देखकर चलता है। घबराया हुआ रामू वापस भागा आता है।]

रामू दादा, श्यामू और लकड़िया तो चले आवत हैं! और तुम कहत रहे मदनपुरे माँ तो कऊ भैइया नाहिं मरा!

गिरधारी हमे सबेरे ही फोन आया था। किसी ने योंही उड़ा दी होगी।

रामू (पछतावे के साथ) तो इ सब नाहक हुआ?

गिरधारी जो हुआ, अच्छा हुआ। मदनपुरे मे न सही तो भिण्डी बाज़ार और रहमान गली में बीसियो भैइये कत्ल हुए। इससे पहले कि शत्रु तुम्हारा गला काटे, तुम उसका टेंटुआ दबाओ! भैइये तो तब तक न चौंकते, जब तक वह हयातू उनके सीनों में छुरा न भोंकता। सुस्त बैलों को चलाने के लिए उनकी दुमो पर चिकोटी काटनी ही पड़ती है। इस बस्ती में भैइयो को भी इसकी ज़रूरत थी। क्या हयातू ने छुरा न खरीदा था''? क्या वह पाजी बुड्ढा पठान इकट्ठे न कर रहा था तो चलो'!

[उपेक्षा से घीसू की ओर देखकर चला जाता है।]

मुलिया (उठकर चीखते और सिर पीटते हुए) और झूठी खबर पर तुम पापियो ने यह हत्याकाण्ड मचा दिया ! (माथे पर दोहत्थड मारती है और घीसू से लिपटकर कहती है) कहा था जल मे रहकर मगर से बैर न ठानो ! अब हमे किसके सहारे छोड-कर जाइत हो !

[रोती है। माँ आती है और घीसू को अचेत पडे देखकर पछाड खाकर गिर जाती है।]

घीसू (आँखें खोलता है। उठना चाहता है, पर उठ नही पाता। बड़े कष्ट से जबान होठो पर फेरकर कहता है ) रोकर मेरे रास्ते को कठिन न बना, मुलिया ! यह रोने की नही, खुश होने की बात है। तेरा पति अपने निर्दोस भाई की पीठ मे छुरा भोकते हुए या अपने भाई के बच्चे का गला काटते हुए नही मर रहा, वह मर रहा है, अपने भाई की रक्षा करता हुआ, उसके कुटुम्ब को बचाता हुआ !

[फिर बेहोश हो जाता है। कुछ व्यक्ति हयात के शव को उठाये हुए लाते हैं। साथ-साथ गिरधारी दादा भी हैं।]

गिरधारी लिटा दो इस पाजी को इसके पहलू मे ! जानते हो तुम सबको क्या बयान देना है ?

रामू ई कि हयातू ने काला झण्डा लगाया तब घीसू ने उसे टोका। इस पर हयातू और पठान छुरे लेकर दौड पडे अऊर मारा-मारी होइ गयी। हयातू ने घीसू को मारा।

गिरधारी हाँ ! हयातू ने घीसू को मारा ! (मुलिया से) जानती है मुलिया, तुझे पुलिस को क्या बयान देना है ? अगर तुझे अपनी और अपनी बच्ची की जान प्यारी है तो कान खोलकर सुन ले—घीसू ने हयातू को काला झण्डा लगाने से रोका और हयातू ने घीसू के छुरा भोका। एक शब्द भी इधर-उधर किया तो जीते जी गडवा दूँगा धरती मे। जानती है गिरधारी दादा को ! (अपने साथियो से) देखो सडक के दोनो ओर पहरा लगा दो। कोई इधर न आने पाये। पुलिस आती होगी, मैंने फोन कर दिया है।

[बदरी भागा आता है।]

काफिर के बच्चे को मुसलमानों के पंजो से बचाया, पाला-पोसा और परवान चढाया और यह काफिर तुम्हारे सामने खडा है। उसकी लाश से गुजरकर ही तुम इसको ले जा सकोगे।

[उसी क्षण गिरधारी दादा का फेंका हुआ छुरा
सीने मे आ लगता है और घीसू आधा सडक
बरामदे मे गिरता है। मुलिया चीख मारकर
गिरती है। दूसरे क्षण गिरधारी दादा
नियाज़ मियाँ को घसीटकर अपने सा
पल भर बाद बैक-ग्राउण्ड मे नि

**मुलिया** (उसके सिर को आराम से धरती पर टिका देती है और सिसकती हुई कहती है) बच्चू को मैं अपनी बेटी की तरह पालूँगी, मेरा विश्वास करो।

[घीसू एक बार आँखें खोलकर सन्तोष-भरी दृष्टि से उसकी ओर देखता है, फिर उसकी आँखें बन्द हो जाती हैं। माँ की बेहोशी टूटती है और वह रोती हुई और बेटा'' बेटा'''पुकारती उसकी ओर बढ़ती है।]

[सहसा पर्दा गिरता है।]

क्यो मिला वछ्शू ?

**बदरी** सब जगह ढूँढा है, गिरधारी दादा, कही पता नही चला। न जाने कौन से बिल मे समा गया ?

**गिरधारी** कोई बात नही ! बिल से निकालकर सांप के बच्चे का सिर कुचला जायगा। जाओ, तुम अपने अपने पहरे पर ! मैं पुलिस को देखता हूँ। इधर कोई न आने पाये। (जाते-जाते मुलिया से) याद रखना, मुलिया नही जीती को गडवा दूँगा !

*[सब चले जाते हैं, घीसू फिर बडबडाता है]*

**घीसू** आ रहा है, मै देख रहा हूँ, आ रहा है !

**मुलिया** (रोते हुए) कौन आ रहा है ?

**घीसू** (दाँत पीसकर उठने का प्रयास करते हुए) एक तूफान आ रहा है। *भयकर तूफान आ रहा है ! जिसमे ये सब दादे, ये गुण्डे, ये धर्म और जात पाँत के दर्प ये गरीबो का लोहू चूसने वाले पूँजी पति, ये भोले भोले लोगो को लडवाकर अपना उल्लू सीधा करने वाले नेता—सब मिट जायेंगे—एक नयी दुनिया बसेगी, जिसमे* गरीबो का, मजदूरो का राज होगा, जहाँ हिन्दू-मुसलमान न होगे। काले गोरे न होगे। सब इन्सान होगे, भाई भाई होंगे।

*[पारो सहमी-सहमी-सी भुस की कोठरी से निकलती है और डरी हुई माँ से लिपट जाती है।]*

**पारो** माँ

**मुलिया** (रोते हुए उसे बाँहो मे भर लेती है) *अरी तू कहाँ थी ? देख तेरे बापू का क्या हाल कर दिया निर्दइयो ने !*

**पारो** (भुस की कोठडी की ओर सकेत करके) बछ्शू

**घीसू** (बुझने से पहले दीये की लौ फिर लपक उठती है) मुलिया ! (उसकी ओर एक विचित्र प्रार्थना-भरी निगाहो से देखता है) मरने वाले की एक अभिलाषा पूरी करोगी ?

**मुलिया** (रोते हुए सिर हिलाती है) कहो !

**घीसू** बछ्शू को अपने बच्चो की तरह पालना, उसे इन हत्यारो के हाथ न जाने देना।

*[मुलिया उत्तर नही देती, रोये जाती है।]*

*(उठन का प्रयास करते हुए)* मुलिया !

मुलिया (उसके सिर को आराम से धरती पर टिका देती है और सिसकती हुई कहती है) बच्चू को मैं अपनी बेटी की तरह पालूंगी, मेरा विश्वास करो !

[घीसू एक बार आँखे खोलकर सन्तोष भरी दृष्टि से उसकी ओर देखता है, फिर उसकी आँखें बन्द हो जाती हैं। माँ की बेहोशी टूटती है और वह रोती हुई और बेटा ' बेटा'' पुकारती उसकी ओर बढती है।]

[सहसा पर्दा गिरता है।]

# साझे-विरसे



कृष्णकान्त वर्मा 'विवेक'

---

## पात्र-परिचय

| | |
|---|---|
| राजेश्वर श्रीवास्तव | दैनिक समाचारपत्र के संचालक एवं मुख्य सम्पादक। अवस्था लगभग ५० वर्ष। चेहरे पर सदैव एक गम्भीर मुस्कराहट। सफेद दूधिया बाल, सुनहरी फ्रेम का चश्मा एवं हर समय जलती सिगरेट हाथ में उनके व्यक्तित्व के अनुरूप गम्भीर वातावरण को जन्मते हैं। |
| रेवती श्रीवास्तव | राजेश्वर की ४५ वर्षीया पत्नी, साधारण खादी की साड़ी में लिपटी त्याग की प्रतिमूर्ति। आधे से अधिक बाल शायद संघर्षों ने सफेद कर डाले हैं अन्यथा भरा गोल चेहरा भरमा देता है। |
| रमण | २८ वर्षीय। दैनिक का सम्पादक। सदैव मुस्कराता युवक। अपनी आयु से अधिक परिपक्व। सदैव चिंतन में डूबे चेहरे से सहज ही लगता है कि युवक आधुनिक भौतिक मोह से अछूता और एक सुलझा हुआ व्यक्ति है। |
| सन्धू | ३० वर्षीय युवा सिख पुलिस अधिकारी। पुलिस वर्दी में व्यक्तित्व अत्यधिक रौबीला मगर चेहरे पर सौम्यता। |
| माहेश्वरी | पुलिस कमिश्नर। आयु ५० के आसपास। अत्यधिक रौबीला व्यक्तित्व मुस्कराहट शायद उस चेहरे पर कतई अच्छी न लगे। |
| डॉ० मीरचंदानी | ४८ वर्षीय चिकित्सक। |
| पंकज व नीला | अनुपस्थित पात्र एवं श्रीवास्तव के युवा पुत्र-पुत्री। |
| डी० जी० पुलिस | अनुपस्थित पात्र एवं राज्य के पुलिस महानिदेशक। |

स्थल

अत्याधुनिक बँगले का ड्राइगरूम। मुख्य हाल के दाई ओर बने ड्राइगरूम की दीवारो पर गाधी जी एव गुरुदेव के तैलचित्र लटके हैं एव स्वामी विवेकानन्द की आदमकद मूर्ति के साथ एक कोने मे टी० वी० एव वी० सी० आर० करीने से सजे हैं। कमरे के मध्य मे शीशे (पारदर्शी) की टॉप वाली मेज पर समाचार-पत्र एव पत्रिकाएँ बिखरी पडी हैं। सामने श्रीवास्तव पत्रिका के पन्ने पलट रहे हैं। कमरे की दक्षिणी दीवार की शीशो की खिडकियो से शहर की मुख्य सडक पर भागते वाहनो का शोर सुनाई देता रहता है। कमरे मे किसी फिल्मी गीत की धुन की धीमी ध्वनि के साथ-साथ बराबर के कमरे से पश्चिमी धुन भी बीच-बीच मे उभरती-सी प्रतीत होती है। यह सब इतना धीमा है कि हल्के खटके की आवाज भी स्पष्ट सुनी जा सकती है। कमरे मे फोन की घटी बज उठती है। श्रीवास्तव समाचार-पत्र मेज पर फेंककर फोन उठा लेते हैं।]

राजेश्वर हैलो · (अत्यधिक धीमी आवाज) · हैलो·· (जोर-सा डालकर··· दूसरी ओर से आवाज स्पष्ट नही है)···हैलो···अरे हाँ रमण ! गुड मार्निग ! क्या बात है ? आज सुबह-सुबह ही याद कर रहे हो··· सब खैर तो है ? · क्या (श्रीवास्तव के चेहरे पर भय मिश्रित भाव उभरते हैं और टेलिफोन का चोगा कँपकँपाता-सा प्रतीत होता है)···ओह ! घबराओ नही रमण···मैं सीधा वही आ रहा हूँ··· ठीक है ! ठीक है···तुम्ही चले जाओ·· मगर ध्यान से क्या··· ठीक है मैं पुलिस को इन्फार्म कर देता हूँ। (श्रीवास्तव टेलिफोन का चोगा धीमे से रख देते हैं और सिगरेट मुँह से लगाए चिन्तित मुद्रा मे खिडकी से शहर की मुख्य सडक को घूरते रहते हैं।)

[यकायक रेवती हाँफती हुई-सी कमरे मे प्रवेश करती है और सोफे पर जा गिरती है। राजेश्वर रेवती को कमरे मे आता देख सोफे का सहारा लेकर खडे हो जाते हैं। रेवती की टटोलती नजरें श्रीवातव को सटपटा देती हैं।]

राजेश्वर क्या बात है रेवती…काफी परेशान-सी लग रही हो। (रेवती कुछ देर तक गम्भीरता ओढ़े देखती-भर रहती है मगर श्रीवास्तव बेचैन-से हो उठते हैं।)

रेवती रमण का फोन था न…?

राजेश्वर हाँ।

रेवती मैं कहती हूँ…(रेवती की बात पूरी होने से पहले ही श्रीवास्तव बोल उठते हैं।)

राजेश्वर रेवती…एक ही बात को दुहराने से कोई लाभ नहीं…मैं कह चुका हूँ कि इस घर को छोड़कर केवल मेरी लाश जा सकती है… (रेवती टोकना चाहती है मगर राजेश्वर उसे बैठे रहने का इशारा करते हैं)…मैं लोगों को सीख दे रहा हूँ कि उग्रवादियों के भय से अपने घर न छोड़ें वरना अनर्थ हो जाएगा…देश इन फिरका-परस्त लोगों की दया पर निर्भर हो जाएगा… हम अपने ही देश में शरणार्थी बनकर रह जाएँगे।

[रेवती पहलू बदलती रहती है। ऐसा लगता है जैसे वह राजेश्वर की बात सुन ही न रही हो। जैसे ही राजेश्वर कहते-कहते रुकते हैं, रेवती चीख-सी उठती है।]

रेवती वे लोग धमकियाँ दे रहे हैं और यह आप अच्छी तरह जानते हैं कि उनकी धमकियों का अर्थ क्या है?

राजेश्वर (राजेश्वर के चेहरे पर गुस्से के भाव उभर आते हैं) क्या है?… मौत…?…वह एक ही बार आती है…मगर इस देश की जमीन के किसी टुकड़े पर किसी धर्म, जाति या भाषा का नाम नहीं खुदा और मैं जिस टुकड़े पर रहता हूँ वह मेरा है…मेरी पहचान… मेरा अस्तित्व…तुम क्या समझती हो कि अपने दो बच्चों या परिवार को बचाने के लिए मैं अपने आदर्शों और कर्त्तव्य को धर्मान्धता की आग में झोंक दूँ या फिर एक बेटे या बेटी को बचाने के लिए पूरे राष्ट्र की अपेक्षाओं का गला घोंट दूँ…बेटा, बेटी या पत्नी तो ऐसे अस्तित्व नहीं जो फिर न मिल सकें मगर राष्ट्र को पैदा नहीं किया जा सकता…नहीं! यह कभी नहीं हो सकता…(राजेश्वर की मुट्ठियाँ भिंच जाती हैं और वह एकटक गांधी जी की तस्वीर को घूरते रहते हैं।)

[रेवती राजेश्वर को निहारती रहती है और यकायक राजेश्वर के क्रोध से भयभीत-सी हो जाती है। उसके चेहरे से लगता है जैसे वह अपनी ही बात पर पछता रही हो।]

रेवती  मैं आपकी भावनाओं···

राजेश्वर  (रेवती का वाक्य पूरा होने से पूर्व ही राजेश्वर पुन बोल उठते हैं) ये कोरी भावनाएँ नही, हमारा यथार्थ है रेवती···पंजाब तभी है जब भारत है और मैंने स्वय को कभी भारतीय से पहले पजाबी नही समझा और अब इस ढलती उम्र मे कुछ सिरफिरे लोगो के डर से मैं अपनी जिन्दगी की भीख एक शर्मनाक मौत से कभी नही माँगूंगा·· किसी कीमत पर नही। (राजेश्वर की आवाज़ धीरे-धीरे ऊँची होती जाती है और रेवती घबरा-सी जाती है।)

रेवती  खैर ! अब छोडिए इन बातो को और नाश्ता कर लीजिए···दफ्तर को पहले ही देर हो चुकी है। (रेवती वातावरण की गम्भीरता को कम करने के लिए विषय बदलना चाहती है। उसी समय हाँफते हुए रमण प्रवेश करता है, जिसके एक हाथ मे एक कागज एव दूसरे मे चश्मा है। रेवती व राजेश्वर का ध्यान रमण पर केन्द्रित हो जाता है। रेवती चिन्तित-सी रमण को ताकती रहती है। रमण इतना घबराया-सा है कि उसे अभिवादन का भी ध्यान नही रहता और हडबडाहट मे वह सीधा राजेश्वर की बगल मे खडा हो जाता है।)

रमण . स···स···र···वे···(रमण अत्यधिक भयभीत-सा हकला जाता है।)

राजेश्वर . बैठ तो जाओ रमण ! तुम तो ऐसे घबरा रहे हो जैसे मौत ने दबोच रखा हो···अरे ! इन छोटी-छोटी धमकियो से डरने लगे तो हो ली पत्रकारिता। (राजेश्वर के शब्दो का कोई विशेष प्रभाव रमण पर प्रतीत नही होता और वह राजेश्वर को घूरता रहता है। राजेश्वर रमण के कागज लेकर उसे पढते हैं तो उनके माथे पर बल पड जाते हैं। गुस्से से थर-थर काँपते हाथो से वे कागज के टुकड़े-टुकडे कर देते हैं और रेवती एव रमण आश्चर्य से उन्हें घूरते रह जाते हैं।)

रमण : सर···?···यह क्या किया आपने···यह तो पुलिस को देना था और आपने इसे···?

राजेश्वर : रमण ! पंजाब के लाखो हिन्दू और सिख हमारी ही तरह निहत्थे हैं, जिन्हे कोई विशेष सुरक्षा बल नही मिले हैं। हालांकि यह सुविधा मुझे मिल सकती है, मगर अपने शरीर के किसी अग के बागी हो जाने पर बाहरी नही, आन्तरिक सुरक्षा ज्यादा जरूरी है।

रमण : सर ! कोरी आदर्शवादिता से इस खतरे से नही भिड़ा जा सकता

क्योंकि हम चन्द पागल लोगो से भिड रहे हैं, जो इन सब बातो को निरर्थक और कागजी भर समझते हैं। (रमण राजेश्वर से नजरें नही मिला पाता और सतत् दीवार पर टँगी गाधी जी की तस्वीर को निहारता रहना है। राजेश्वर की कडी निगाहे रमण के पूर अस्तित्व को टटालती रहती हैं।)

राजेश्वर रमण ! जिन्दगी का मोह और मृत्यु का भय तुम्हे कायर बना रहा है मगर क्या सिर्फ हम ही यह सब सह रहे हैं ? शायद तुम अपना ही सामना नही कर पा रहे हो।

[रेवती रमण को बोलता देखकर उत्साहित हो उठती है। राजेश्वर की बात पूरी होते ही वह झटके से उठते हुए कहती है]

रेवती मगर इससे अन्तर क्या पड जाता है अगर हम पजाब से बाहर जा कर ही पत्र निकालते रहते है। कम से कम इस रोज़-रोज की·· ।

[रेवती की इस बात पर राजेश्वर खिन्न से हो जाते हैं और कमरे म टहलना शुरू कर देते है।]

राजेश्वर कोई अन्तर नही पडेगा हम मुँह छुपाकर भाग जायेंगे तो तुम क्या समझती हो, पजाब मे कोई देशभक्त नही रहेगा·· ? लोग बडे फख्र स कहेगे कि स्वतन्त्रता सेनानी का बेटा पजाब से भाग खडा हुआ । कितने साहसी और सार्थक लेख लिख रहा है दिल्ली मे छुप-कर । रेवती, तुम मेरी पत्नी होकर मुझे कायरता सिखा रही हो। (राजेश्वर के व्यग्यात्मक लहजे से रेवती सटपटाकर रमण को देखती है और रमण समय को परखकर बात बढाने का प्रयास करता है।)

रमण सर ! ये तो व्यावहारिक बात कर रही हैं · भला बैठे-बिठाये हम क्यो मुसीबत मोल लें जब इसका विकल्प उपलब्ध है· । यह तो आ बैल मुझे मार वाली बात हो गयी।

राजेश्वर नाउ स्टॉप इट रमण ! दफ्तर जाकर कल के ऐडिशन की तैयारी करो·· थोडा देर मे मैं भी पहुँच रहा हूँ · मेरे आने से पूर्व सम्पादकीय तैयार कर लेना मैं · । (राजेश्वर की बात पूरी नही हो पाती और फोन की घटी बज उठती है। सभी का ध्यान उस ओर चला जाता है। रमण राजेश्वरी के उठने से पहले ही फोन तक पहुँच जाता है।)

रमण : हैलो·· जी हाँ·· हाँ हैं·· प्लीज होल्ड ऑन·· ।

[रमण चोंगे पर हाथ रखकर राजेश्वर से कहता है, डी० जी० पुलिस।]

**राजेश्वर** (फोन थामकर) हैलो ! राजेश्वर हियर !···गुड मॉनिंग·· कैसे याद किया· हाँ·· नहीं, आज सुबह ही दोनों कवर करने गये थे·· क्या मतलब ?·· क · क·· ब···कहाँ···(राजेश्वर के हाथों में चोंगा कांपता रहता है और वे निढाल-से दीवार का सहारा लेकर खड़े हो जाते हैं)·· ठीक है, मैं पहुँच रहा हूँ·· (राजेश्वर चोंगा जोर से पटकते हैं और दोनों हाथों में सिर थामकर बैठ जाते हैं। रेवती और रमण यकायक इस परिवर्तन से घबरा उठते हैं।

**रेवती** क्या बात थी·· क्या कह रहे थे ? (रेवती राजेश्वर के कन्धे पर हाथ रखे-रखे पूछती है।)

**राजेश्वर** रे···व·· ती (राजेश्वर की आवाज़ भर्रा-सी जाती है। रेवती और अधिक चिन्तित हो उठती है।)
रेवती·· पंकज और नीला·· (राजेश्वर यकायक फूट-फूटकर रोने लगे।)

**रेवती** क्या हुआ उन्हें ··कहाँ हैं वे लोग···भगवान के लिए कुछ तो कहिए ···(रेवती ने राजेश्वर को झिझोड डाला मगर राजेश्वर अविराम रोते जा रहे थे। राजेश्वर कुछ देर तक सिसकने के बाद यकायक गम्भीर हो गए। उनके चेहरे से ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो कुछ हुआ ही न हो।)

**राजेश्वर** रेवती ! पंकज और नीला को उग्रवादियों ने मार डाला है। (राजेश्वर ने नज़र गांधी के चित्र पर गाड़ दी। रेवती की आँखें खुली-की-खुली रह गयी और वह सोफे पर बैठी-बैठी ही निढाल-सी हो गई। रमण भी यह सुनकर सन्न-सा हो गया। वह छत को घूरता जा रहा था। राजेश्वर ने रेवती को झिझोडा मगर वह गिर पड़ी)
रमण···रमण ! जल्दी करो·· पानी लाओ···। (रमण निश्चल बैठा रहा। राजेश्वर ने उसे झिझोडा तो वह मरे कदमों से आगे बढ़ा। यकायक नीला की फोटो देखकर उसके कदम रुक गये। फोटो को देखते-देखते उसकी मुट्ठियाँ भिंच गयी। आँखों में लाल डोरे उभर आये। वह यकायक पलटा और राजेश्वर को कॉलर से पकड़कर चीख उठा।)

**रमण** तुम···तुम नीलू की मौत के जिम्मेदार हो···अपने झूठे आदर्शों के नाम पर तुमने नीलू की बलि दे डाली···अपनी महत्त्वाकाक्षा को पूरा करने के लिए तुमने यह हत्या कर दी···ऑय विल···। (रमण

राजेश्वर को झिझोड़ता रहता है। राजेश्वर रमण को धकेलकर रसोईघर से पानी लाते हैं और रेवती के मुंह पर छींटे डालते हैं। रेवती पलकें झपकती है तो राजेश्वर उसका चेहरा दोनों हाथों में थाम लेते हैं।)

राजेश्वर रेवती ··रेवती · । (रेवती अपलक छत को घूरती रहती है। राजेश्वर रेवती को सोफे पर लिटाकर फोन का नम्बर घुमाते हैं।) 'हैलो ! डाक्टर मीरचन्दानी·· ? मैं श्रीवास्तव बोल रहा हूँ··· प्लीज़ उन्हें फोन पर बुला दें·· हैलो डाक्टर···देखिए अचानक रेवती बेहोश-सी हो गयी है—ओह मैं तो भूल ही गया था—ठीक है मैं डी० जी० पुलिस से बात करता हूँ। आप पुलिस-वाहन मे आ जाइए · यदि कर्फ्यू-पास की आवश्यकता होगी तो भी वे कुछ तो करेंगे ही —ठीक है, मैं बात कर लेता हूँ।

[राजेश्वर ने दूसरा नम्बर घुमाया और बेसब्री से दूसरी ओर की आवाज़ की प्रतीक्षा करने लगे]

हैलो · राजेश्वर श्रीवास्तव हियर—यस···डी० जी० साहब से बात करवा दें · थैंक्स, मैं होल्ड कर रहा हूँ···हैलो !·· अरे नहीं ·· मेरी पत्नी बेहोश हो गयी है। मगर कर्फ्यू के कारण डाक्टर का आना सम्भव नहीं। आप कुछ व्यवस्था कर दें तो···जी।·· कौन?··· नहीं अभी तक · (इसी बीच कमरे मे एक युवा सिख पुलिस अधिकारी एव दो कॉन्स्टेबल प्रवेश करते हैं। राजेश्वर उन्हें देखकर यकायक चौंक-से पड़ते हैं)·· यस···यस···वे लोग अभी-अभी पहुँचे है · थैंक्यू। (राजेश्वर फोन बद कर जैसे ही मुड़ते हैं···युवा पुलिस अधिकारी हाथ जोड़कर अभिवादन करता है।)

सधू यह सब क्या हो गया अंकल·· ? (सधू धीमे कदमो से रेवती की ओर बढ़ता है। राजेश्वर चौककर कहते हैं।)

राजेश्वर अरे हाँ सधू बेटे। तुम अपनी गाड़ी भेजकर डा० मीरचन्दानी को तो बुलवा लाओ·· रेवती बेहोश हो गई है।

[सधू सकेत से दोनो कॉन्स्टेबलो को भेजकर रेवती के निकट आ जाता है।]

संधू आण्टी···आण्टी···(सधू रेवती को हिलाता रहता है।)

[रमण जो जलती निगाहो से सधू को घूर रहा था यकायक चीख उठता है।]

**रमण** आदमी की खाल मे भेडिये हो तुम सब···क्या बिगाडा था, नीलू और पकज ने तुम्हारा···?

**राजेश्वर** (रमण को झिडकते हुए) रमण ! होश मे बात करो।

**संधू** रहने दीजिए अकल·· रमण जी वही कह रहे हैं, जो उग्रवादी चाहते हैं। हर सिख उग्रवादी लगे···यही तो उनका मन्तव्य है·· फिर यदि रमणजी-जैसे राष्ट्रीय स्तर के चिन्तक भी ऐसी आत्मघाती सोच के शिकार हो जाते हैं तो इससे बडी सफलता क्या होगी उनकी·· ? वे तो यही चाहते हैं कि आपसी विश्वास की यह डोर भी टूट जाये।

**राजेश्वर** सधू बेटे ! रमण नीलू की खबर सुनकर अपने होश खो बैठा है।

**सधू** अकल, अब तो आदत-सी हो गई है यह सब सहने की·· अगर हम किसी हिन्दू के घर मे उसकी सुरक्षा के लिए भी प्रवेश करते हैं तो औरतो और बच्चो पर आतक छा जाता है···उनकी घिग्घी बँध जाती है···उस समय मन करता है काश ज़मीन फट जाती···पता नही क्यो हम लोग आपसी विश्वास खोते जा रहे हैं·· पुलिस की इस वर्दी मे भी वह विश्वास नही रहा। केवल भय, अविश्वास और आतक रह गया है·· जी करता है बोटी-बोटी नोच लूँ उनकी, जिन्होने आज हमे इस स्थिति तक पहुँचा दिया है। (सधू के चेहरे पर लाली छा जाती है और मुट्ठियाँ भिंच जाती हैं।)

**राजेश्वर** सधू बेटे ! इस देश की तकदीर मे बदा है कि अपने ही घुन की तरह चाटेंगे इसे और हम जो खुद को जनता कहते है भीगी बिल्ली बनकर अपने-अपने स्वार्थ मे अन्धे अपने दडबो मे घुसे रहेगे। ज्यादा हो गया तो सरकार को दोष दे दिया, नेताओ को गाली बक दी या कानून और व्यवस्था का रोना रो लिया···और हम कर ही क्या सकते है सिवा तोड-फोड, आगजनी या हडताल और बन्द के··· (राजेश्वर की बात बीच ही मे अधूरी रह जाती है। डाक्टर के साथ-साथ पुलिस कॉन्स्टेबल कमरे मे प्रवेश करते हैं। सभी का ध्यान उस ओर चला जाता है। डाक्टर धीरे धीरे रेवती का निरीक्षण करते हैं। राजेश्वर पास ही खडे हो जाते हैं।)

**राजेश्वर** समथिंग सीरियस डाक्टर···?

**डाक्टर** नही···कोई खास बात नही···शायद गम्भीर शॉक लगा है···मैं इजैक्शन दे रहा हूँ···हाँ ··यदि आध घटे तक कोई प्रभाव नही होता तो इन्हे हॉस्पिटल ले जाना पड़ेगा।

[इसी समय कमरे मे एस०पी० पुलिस प्रवेश करते हैं। उनके पीछे दो कॉन्स्टेबल भी अन्दर आते हैं। राजेश्वर के साथ-साथ अन्य लोगों का ध्यान भी उनकी ओर आकृष्ट हो जाता है। सधू सावधान होकर सैल्यूट करता है मगर एस० पी० का ध्यान राजेश्वर की ओर ही रहता है।)

राजेश्वर अरे एस० पी० साहब·· ? आप कैसे पहुँच गये···लगता है सारा पुलिस विभाग ही आज हमारे यहाँ जमा हो रहा है।

[राजेश्वर एस० पी० को बैठने का सकेत कर डाक्टर को दरवाजे तक छोडने जाते हैं और सधू सकेत से कॉन्स्टेबल को जाने का आदेश देता है। राजेश्वर एस० पी० के सामने आकर बैठ जाते हैं।]

राजेश्वर कहिए माहेश्वरी साहब, कैसे आना हुआ? (राजेश्वर के सयत स्वर से एस० पी० आश्चर्यचकित-से रह जाते हैं।)

एस० पी० इसका मतलब आपको कुछ मालूम नही·· ?

[राजेश्वर के होठो पर एक मायूस-सी मुस्कराहट बिखर जाती है।]

राजेश्वर शायद पकज और नीला की हत्या पर किसी मन्त्री का सवेदना-सन्देश लाए हैं आप ?

एस० पी० श्रीवास्तव साहब! अभी-अभी आपके दफ्तर मे एक बम फटने से दो व्यक्ति घायल हो गए है और···(एस० पी० के इस रहस्योद्घाटन से कमरे में बैठे सभी लोगो के चेहरे पर आतक छा जाता है।)

राजेश्वर ओह नो···। (राजेश्वर आँखें मूंद लेते हैं।)

एस० पी० आॅय एम सॉरी श्रीवास्तव साहब, मगर हालात को देखते हुए यह बहुत जरूरी हो गया है कि आपके बच्चो की हत्या का रहस्य प्रेस तक न पहुँचे और स्वय आपकी सुरक्षा की कडी व्यवस्था हो ताकि उन लोगों को कोई मौका न मिले।

राजेश्वर मैं आपका मतलब नही समझा।

एस० पी० श्रीवास्तव साहब! वर्तमान स्थिति मे या तो आप पजाब से बाहर चल जायें या हमे मजबूरन आपको 'हाऊस एरेस्ट'···।

राजेश्वर मि० माहेश्वरी! मुझे हिरासत मे रखकर आप एक और खतरा मोल ले रहे हैं। दूसरे आप मुझे मेरे बच्चो के शवो से वचित कर एक गैर-कानूनी काम··।

एस० पी० श्रीवास्तव साहब प्लीज ! आप हमारी मजबूरी क्यो नही समझते। यदि आपके बच्चो का अन्तिम सस्कार सार्वजनिक रूप से हुआ तो सारा शहर भडक उठेगा। स्थिति और अधिक बिगड जायेगी'' इस समय इसके सिवा कोई अन्य विकल्प नही कि आप राष्ट्रहित मे चुप्पी साध लें। आप तो अच्छी तरह जानते हैं कि ये लोग कितने निर्मम हो चुके है।

राजेश्वर आपका मतलब है कि मैं घुटने टेक दूँ और कुण्डली मारकर अपनी सुरक्षा की चिन्ता करूँ'' मगर जो सामाजिक अपेक्षाएँ हम लोगो से जुडी है उनका क्या होगा'''?'' मैं तो सुरक्षा-गार्डों की फौज लेकर चलूँगा मगर उन लाखो पजाबियो का क्या होगा जो घरो, बाजारो और बसो मे निहत्थे फिर रहे हैं ?

एस० पी० श्रीवास्तव साहब ! मैं आपसे बहस करने नही आया बल्कि मुझे जैसे निर्देश मिले हैं वही आपको बता रहा हूँ शेष आपकी मर्जी '' मुझे मजबूरन आपको हिरासत मे लेना पडेगा।

[राजेश्वर की मुट्ठियाँ भिच जाती हैं।]

राजेश्वर अग्रेजो से विरासत मे मिली है यह अफसरशाही हमे, जो सामान्य जनता को अपने रहमो-करम पर रखने के लिए नित नये सूत्र ईजाद करती है'' इस देश के जननायक एक पूरी सशस्त्र सेना साथ लेकर निकलते हैं अपने रहनुमाओ से मिलने'' उनकी सुरक्षा पर करोडो रुपये पानी की तरह बहाकर हर रोज नये तमाशे करती है यह चापलूस अफसरशाही, मगर कभी यह सोचने का समय नही मिलता आप लोगो को कि इस महाद्वीप जैसे राष्ट्र मे यह बुलेट प्रूफ राजनीति कितने दिन चलेगी'''कहाँ'''कहाँ बाँटोगे यह सुरक्षा-कवच जब श्रीनगर से भिवडी तक आस्तीन के साँप कुलबुलाते रहेंगे और राजनीति और अफसरी गठबधन इन्हे दूध पिलाता रहेगा। देश की जनता तो तुम्हे उस मूर्ख कुत्ते-सी लगती है, जिसे हड्डी से लिपटा अपना ही खून मज़ेदार लगता है। मगर यह मत भूलो कि जिस दिन वह हड्डी छूटेगी उसके मुँह को खून लगा होगा, उस दिन उसका शिकार कौन होगा ? अपने ही लहू का उन्माद इतना बढ चुका है इस देश पर कि'''? वोट के लिए धर्म, जाति और रंग का जहर पिलाते हैं और जब वह असर करने लगता है तो सुरक्षा गार्ड दे देते हैं। यही नही, जब असख्य लोग इस चौपड मे मारे जाते हैं तो शोक-सन्देशो की बाढ ले आते हैं, सवेदनाएँ प्रकट करते हैं, अनुग्रह-

राशियाँ बाँटते हैं और इस तरह वे हत्यारे नही, मसीहा बन जाते हैं ·· नैतिक पतन की हद होती है। मगर इस देश मे शायद कोई नही ·· बस हर कोई घात लगाए बैठा है कि कहाँ मौका मिलेगा ?

एस० पी० प्लीज मि० श्रीवास्तव ! आप समय नष्ट कर रहे हैं · (माहेश्वरी का वाक्य पूरा होने से पूर्व ही रमण का अट्टहास गूँजा।)

रमण हा ! हा ! हा · आप बिल्कुल ठीक कह रहे हैं माहेश्वरी साहब। प्रजातन्त्र मे सत्य वह है, जो बहुमत को अच्छा लगे, यथार्थ वह है जो सबकी जुबान बन्द कर दे·· जानते हैं क्यो·· ?·· क्योकि ये एक पगु समाज के रहनुमा हैं। जो समाज पिछले चालीस वर्षों से हर क्षेत्र मे कुछ-न-कुछ नया पाने की इच्छा मे सतत् आत्म-विश्वास खोता जा रहा है। गरीबी, अशिक्षा, भ्रष्टाचार और शोषण का नशा इस कदर चढा है कि इसे अपनी ही सुध नही···जो स्वय को होश मे कहते हैं असल मे भौतिकवाद की मरीचिका मे भटक रहे हैं ·· किसी स्तर पर समन्वय नही· एक उद्देश्यहीन समाज बनकर रह गए हैं हम लोग, जो बस क्षण भर जीने की लालसा मे अपना पूरा भविष्य अपने भूत की भूलो के पास गिरवी रख देते हैं। कोरी नारेबाजी या प्रस्ताव पास कर वोट तो मिल सकते हैं मगर राष्ट्रीय एकता एक मजाक-भर बनकर रह जाती है। जिस देश का समाज पेट से भूखा, तन मे नगा, मन से लालची और बुद्धि से दिवालिया कर दिया गया हो उस देश के रहनुमा सदैव चैन की बसी बजाते हैं।

सधू रमण जी ! आपका जोश और होश दोनो प्रशसनीय हैं मगर इस अथाह सागर को मथेगा कौन ? एक ओर तो हर कोई अपनी व्यक्तिगत पहचान के लिए तत्पर है तो दूसरी ओर राष्ट्रीय मुख्यधारा से दूर होता जा रहा है· दूसरो को दोष देना तो सरल है मगर अपने यथार्थ से सभी आँखें मूँद लेत हैं। हमारी कथनी और करनी का अन्तर भ्रष्टाचार के भूत की तरह कभी कही छोटा पडता नजर नही आता।

एस० पी० (चेहरे पर खिन्नता के भाव उभर आए।) सधू ! तुम पुलिस स्टशन जाओ · मेरी प्रतीक्षा करना। मैं थोडी देर मे वहाँ पहुँच रहा हूँ।

[सधू ने सैल्यूट बजाकर प्रस्थान किया। एस०पी० राजेश्वर की ओर मुडे।]

एस० पी० मि० राजेश्वर! चूंकि शहर की स्थिति नाजुक बनी हुई है और उन लोगो की तलाश जारी है इसलिए हम किसी भी प्रकार का कोई खतरा मोल नहीं ले सकते। आप घर से बाहर केवल पुलिस गार्ड के साथ ही निकल सकते हैं, मैं आपके मकान के चारो ओर पहले ही पुलिस तैनात कर चुका हूँ·· हाँ, अगर आप चाहे तो आपको पकज और नीला के अन्तिम सस्कार मे सम्मिलित किया जा सकता है मगर एकदम अकेले और गुप्त रूप से, ताकि रहस्य न खुल जाए।

[राजेश्वर एस० पी० को घूरते जा रहे थे।]

राजेश्वर अपने जवान बेटे को आग देने भी गुप्त रूप से जाऊँ? ··और बेटी की अर्थी सजाना तो दूर उसका मुंह भी दुनिया से मुंह छुपाकर देखूं·· ? इस खौफ मे कितने दिन जी सकता है आदमी·· ?···कब तक हम यूं घुटने टक-टककर चलते रहेंगे?

एस० पी० मि० श्रीवास्तव, इसमे डर की तो कोई बात नहीं है। जब तक हमे आप लोगो का सहयोग नहीं मिलता, हम [illegible] चलाते रहेंगे। आप अपनी ही बात लें·· [illegible] बातें होती है, आप प्रचार करते हैं कि उग्रवादी [illegible] पुलिस की मदद की जानी चाहिए। मगर [illegible] बीत रही है तो आप भावुक हो रहे हैं। [illegible] सम्पादकीय म उग्रवादियो को सूचना [illegible] यह दुर्घटना न होती—आप प्रेसवाले [illegible] से समस्या का हल करते हैं [illegible] यदा कदा होना है मगर [illegible] पुलिसवालो के पास [illegible]

अपने आदर्शों और देश के करोड़ों बेटों को बचाने के लिए अपने दो बच्चे न्यौछावर कर दिये हैं···पंकज और नीला के हत्यारे हमारा ही एक गला-सड़ा हिस्सा है, इसलिए तुम रोने की बजाय मुस्कराओगी···याद करो रेवती, जलियाँवाला बाग में ऐसे ही हजारों बेटे भून दिये गए थे। मगर तब क्या सारा देश हाथ-पर-हाथ धरे बैठ गया था?···अपनी कोख को दुआ दो रेवती कि उसने दो ऐसे वीर जने, जिन्होंने अपनी मर्यादा को अन्तिम साँसों तक बनाये रखा··· उठो और मिसाल बन जाओ भारतीय माँ की, जो अपनी कोख में ऐसे वीरों को ढोती है···आह्वान करो उनका कि साम्प्रदायिकता और धर्मान्धता की आग को अपने बेटों के खून से बुझाये और समा जाओ भारत माँ में जिसके करोड़ों बेटे एक बार फिर अपने आपको न्यौछावर करने के लिए तत्पर रहें।

[एस० पी० साहब की आँखें नम हो गयी। रमण की आँखों में राजेश्वर के प्रति असीम श्रद्धा उभर आयी थी, उसने रेवती को ढाढस देना चाहा था शायद।]

**रमण** : मम्मी! पंकज और नीला तो शहीद···(रमण का वाक्य अधूरा ही रह गया था। राजेश्वर की कड़कती आवाज़ ने सभी का ध्यान उनकी ओर आकर्षित कर दिया।)

**राजेश्वर** नहीं रमण! इस पागलपन के झगड़े में कोई शहीद नहीं होता। अरे एक घर की आपसी कलह भला जंग कैसे हो सकती है···?···हिन्दू, मुस्लिम, सिख या ईसाई अगर एक-दूसरे के दुश्मन हो जाते हैं तो उनकी यह लड़ाई देश की लड़ाई नहीं। भारत में केवल भारतीय हैं और जब तक वे किसी ग़ैर-भारतीय से नहीं लड़ते उन्हें शहीद कहलाने का अधिकार नहीं। इस लड़ाई में मरनेवाला तो नज़रें झुकाये क्षमादान माँगता है कि उसे अपनों की भूल का शिकार होना पड़ा। शहीद इतना सस्ता नहीं रमण कि धर्मान्धता और फिरकापरस्ती का इल्जाम लेकर मरे···इस अन्धी लड़ाई में न किसी की जीत है न किसी की हार···अपनी ही माँ का गला दबाकर कौन कह सकता है कि वह जो कुछ कर रहा है अपनी सुरक्षा के लिए कर रहा है।

[सभी को जैसे साँप सूँघ गया। यकायक राजेश्वर खड़े होते हैं और एस० पी० से कहते हैं।]

राजेश्वर चलिए एस० पी० साहब।

(सभी खड़े हो जाते हैं और राजेश्वर दरवाजे की ओर बढ़ते हुए रमण से कहते है।) रमण ! तुम आफिस जाओ और जैसे भी हो कल के 'एडिशन' को निकालने का प्रबन्ध करो, मैं थोड़ी देर मे पहुँच रहा हूँ·· हाँ कल का सम्पादकीय मैं स्वयं लिखूँगा।

[इसी के साथ पर्दा गिरता है और नेपथ्य से देश-प्रेम के गीत की आवाज़ स्पष्ट सुनायी देती है।]

# अन्तिम निर्णय



गिरिराजशरण अग्रवाल

---

## दृश्य एक

[समय संध्यापूर्व। स्थान बुंदेलखंड के मकान का कोई कमरा। कमरे में अधिक सामान नहीं है। हाँ, दो शस्त्र दीवार पर लटक रहे हैं। दाईं ओर एक चौकी रखी हुई है। खिड़की के पास खड़े दोनों व्यक्तियों में एक पुरुष है और एक नारी। पुरुष के चेहरे पर चिन्ता पढ़ी जा सकती है। स्त्री कुछ गम्भीर है। वह इतनी व्याकुल नहीं है।]

**वरुण** (हताश-सा) अपराजिता कुछ सुना तुमने ?

**अपराजिता** क्या कुछ विशेष बात हुई ?

**वरुण** मुझे लग रहा है कि एक नक्षत्र के समान टूट जाने के लिए ही तुम मेरे जीवन में उदित हुई थी। जान पड़ता है, मैं मृत्यु की भी शान्ति गँवा बैठा हूँ।

**अपराजिता** वरुण, क्या कह रहे हो तुम ? मेरा मन आज कम भावुक नहीं है, उसे और भावुक न बनाओ। पहले तो इतने भावुक नहीं थे तुम।

**वरुण** चारों ओर युद्ध की विभीषिका व्याप्त है। लगता है कि इस युद्ध से बुंदेलखंड मुक्त न हो सकेगा। मुगल सेना चारों ओर फैल गई है। पुरवासी विषाद के साथ भय से ग्रस्त हो गए हैं।

**अपराजिता** वरुण, विषाद और भय ही छाया है या कुछ और भी।

**वरुण** कहाँ तक बताऊँ अपरा। माँ अपने पुत्रों के, वधुएँ अपने पतियों के मुख निहार रही हैं, ऐसे कि उन्हें फिर देख भी पायेंगी या नहीं ? सब सशंकित हैं। पता नहीं क्या होगा ?

अपराजिता उनके बल-परात्रम को क्या हुआ ? यह कायरता हमारी जाति मे कहाँ से आ गई ?

वरुण उनका बल पौरुष थक-सा गया है। साहस ने जवाब दे दिया है। अपनी धरती का हरण स्पष्ट दिखाई दे रहा है उन्हे। विधर्मियो द्वारा अपनी बहू-बेटियो का अपमान देखकर भी मुँह बन्द किये हुए हैं—अशक्त बन्दी-से।

अपराजिता जब सबके सामन जीवन-मरण का प्रश्न उपस्थित है तो व्यक्तिगत स्वार्थ नितात अनुचित है, दस्युओ द्वारा हमारी माता का दलन हो और हम विवश देखत रहे। उसकी सन्तान यहाँ बैठकर प्रेमालाप करे। कौन उचित कहेगा इसे ? हमको हमारा कर्त्तव्य पुकार रहा है।

वरुण उचित ही है तुम्हारा कथन, अपराजिता ! अभागो के भाग मे भर्त्सना ही लिखी होती है किन्तु जहाँ पर विजय की कोई सभावना न हो वहाँ अपने जीवन की रक्षा तो करनी ही चाहिए। अपना जीवन व्यर्थ मे होम कर दें यह कहाँ की बुद्धिमत्ता है ?

[अपराजिता की भृकुटियाँ टेढी हो जाती हैं]

अपराजिता लगता है, पूरी तरह निराश हो गए ! क्या निराशा ही हमारी नियति है ? क्या मानवजीवन मात्र निराशामय है ? क्या आशा की कोई किरण हमारे मन के अधकार को दूर नही कर सकती ? कैसी बहकी-बहकी बातें कर रहे हो तुम ?

वरुण क्या बताऊँ अपरा ! वातावरण मे युद्ध की कालिमा कुछ इस प्रकार व्याप्त हो गई है कि आशा की एक एक किरण का अस्तित्व खो-सा गया है। मुगल सेना ने इस तरह से घेर लिया है कि किसी को अपने जीवित बचे रहने की आशा नही रही है। सब अपनी पराजय और उसकी निश्चित विजय ही देख रहे हैं।

अपराजिता शत्रु की निश्चित विजय का कारण ?

वरुण (शकित-सा) उनकी बर्बरता और नृशसता। मुगल सेना निर्दयता की साक्षात प्रतिमा बनी हुई है।

अपराजिता और अपनी पराजय का कारण सभ्यता है क्या ?

[वरुण का मुख लज्जा के कारण अरुण हो गया, वह मौन था।]

(पुन गर्व और विषाद के साथ) मैं अपनी जाति की सभ्यता पर गर्व करती हूँ। मुझको अपनी सभ्यता पर अभिमान है, किन्तु स्वय को धोखा देने से क्या लाभ ?

**वरुण** जब सभी अपने प्राणो को बचाने मे लगे हैं तो हम ही क्यो अपने जीवन की बलि दें।

**अपराजिता** क्या यह निश्चित है कि हम भागकर बच ही जाएँगे ? जो अपने घर की रक्षा न कर सके उसका ठौर-ठिकाना क्या ?

**वरुण** हम पूरी तरह घिर गए हैं। अब कोई रास्ता नही है। सिवाय इसके · ।

**अपराजिता** (बीच मे ही) इसका अर्थ यह हुआ कि हमारे पुरुषार्थ का अन्त ही हो गया। नही, मैं नही मानती। सेनापति कौशल को देखो, उसने अभी तक हार नही मानी। ऐसे वीरो के होते हुए मैं कैसे समझूँ कि हम हार गये।

**वरुण** शायद तुम्हे पता नही है कि सेनापति कौशल का एक नेत्र बिंध गया है। युद्ध छोडकर वे भवन मे घायल पडे हैं।

**अपराजिता** सब कुछ ज्ञात है मुझे और इसके आगे भी। सेनापति जैसे ही कुछ स्वस्थ हुए उन्होने तुरन्त रणभूमि मे जाने की इच्छा प्रकट की। जब उनके साथियो ने नेत्र-बाधा की बात कहकर उन्हे रोकना चाहा तो पता है उन्होने क्या उत्तर दिया— 'मुझे तो अब लक्ष्य साधने की सुविधा ही हो गई है।''

**वरुण** धन्य है वह।

**अपराजिता** हाँ, कोई उस वीर के साहस की समता करके दिखाये ? उसने आज ही रात को आक्रमण का विचार किया है। शाम हो रही है। मेरे वृद्ध पिता वहाँ जा चुके हैं। मेरी कामना है कि मेरे भावी पति स्वदेश पर आये सकट को दूर करने के लिए युद्ध मे वीरोचित भाग ले।

[अपराजिता साक्षात् देवी जान पड रही थी। वरुण नत-मस्तक हो गया। अपराजिता ने उसे एक पुष्प अर्पित किया और मौन भाव से अन्दर चली गई।]

## दृश्य : दो

[रात्रि मे कौशल ने अपनी सेना के साथ मुगल सेना पर आक्रमण कर दिया। किन्तु कौशल-जैसे कुछ शूरमा कितना कुछ कर सकते थे ? रात्रिरण मे उन्हे पराजित होकर पीछे हटना पडा। सहसा किए गए आक्रमण से मुगल सेना को पर्याप्त हानि हुई किन्तु विजय पाकर लाभ मे वही रहे।

वरुण तो पहले ही हार मान बैठा था किन्तु अपराजिता की प्रेरणा पर वह युद्धभूमि मे गया। दुर्भाग्य से उसे रात मे ही मुगलो द्वारा पकड लिया गया। उसने रात-भर मुगलो की निर्दयता और नृशसता का नगा नाच देखा था। जजीरो से बांधकर उसे सरदार खालिद के सामने पेश किया गया। खालिद के कुछ कहने से पहले ही वह चिल्ला उठा।]

वरुण (डर से आंखें मीचकर) जीना चाहता हूँ मैं। मैं अभी मरना नही चाहता। मैंने अभी देखा ही क्या है? इतनी जल्दी नही मरना चाहता मैं?

खालिद मरने से डरता है? लडने क्यो चला था? जैसा किया है वैसा भर? क्या तू हमारा मेहमान है कि हम तुझे खिलाकर जिलायेंगे?

वरुण चाहो तो अर्थदण्ड दे सकता हूँ। केवल जीने के लिए।

खालिद गुस्ताखी न कर! जाहिल, मजहब की बात कर।

वरुण मजहब! मैं समझा नही।

खालिद मुसलमान बन सकेगा? जल्दी जवाब दे।

वरुण धर्म बदलना होगा? (क्षणभर ठहरकर) स्वीकार करता हूँ, इस्लाम धर्म स्वीकार कर सकता हूँ, लेकिन एक शर्त पर।

खालिद क्या शर्त है तेरी?

वरुण मैं अपराजिता से प्यार करता हूँ। उससे वचित न हो जाऊँ।

खालिद कौन अपराजिता? कौन है वह?

वरुण यहाँ के सरदार की बेटी, मेरी भावी वधू।

खालिद . यह बात है? जब हम जीत जायेंगे तब तू उसे क्यो न पा सकेगा? एक अपराजिता तो क्या हजार हूरें भी मिल सकती हैं तुझे।

वरुण : नही चाहिए मुझे हूरें और अप्सराएँ, केवल वही मिले तो मैं सतुष्ट हूँ।

खालिद तुझे हमारा साथ देना होगा। ध्यान रखो, हमसे कोई बात छिपाकर नही रखोगे तुम।

वरुण मुझे स्वीकार है।

खालिद जा, अब तू हमारा दुश्मन नही। इत्मीनान रख।

हुए लौट जाते हैं उसी प्रकार अपना देश छोडकर जाने वाले अनेक व्यक्तियो मे अपराजिता भी थी। तीन दिन के भीतर नगर-सीमा से बाहर चले जाने का आदेश हुआ था। मार्ग के एक ओर वरुण खडा हुआ था। उसने देखा कि अपराजिता भी नगर छोडकर जा रही है।

**वरुण** (भीड मे आगे बढकर) अपराजिता, क्या तुम भी पराजित की तरह जा रही हो ? यह नगर छोडकर कहाँ जाओगी तुम ? जो भाग्य मे था वह तो हो ही गया। भविष्य किसके हाथ मे है ?

**अपराजिता** तुम्हे पता नही। मेरे वृद्ध पिता, जिनकी गोदी मे पडकर मुझ मातृहीना न दुलार पाया था, मुझे अकेला छोड गए।

**वरुण** तुम्हार पिता ही नही, मेरे भी बन्धुजन, साथी··· । (गम्भीर हो जाता है) ईश्वर की ऐसी ही इच्छा थी। मैं तुम्हारा हूँ, तुम मेरी हो। ईश्वर का विधान भी यही है कि उजडा घर हमे नही, हम ही उस बसायेगे। तुम न जाओ, अपराजिता न जाओ।

**अपराजिता** (दीनता से) ईश्वर की आज्ञा को शिरोधार्य करके ही जा रही हूँ मैं। वही यह भी जानता है कि हमारा विश्राम-स्थल कहाँ होगा ? न मैं जानती हूँ और न मुझे जानने की चिन्ता ही है।

**वरुण** अपरा ! वह अब भी हमारे हाथ मे है यदि चाहो तो···।

**अपराजिता** किन्तु एक बार हाथ खीचकर बढाने से क्या लाभ ? महानता बार-बार नही आँकी जाती।

**वरुण** लेकिन मुस्लिम धर्म भी तो उदार· ।

**अपराजिता** (बात काटकर) जानती हूँ। सब अपने हित की बात सोचते हैं। सुन चुकी हूँ कि तुमने नया धर्म ग्रहण कर लिया है। उसी की छाप तुम्हारे चेहरे पर दिखाई दे रही है। क्या-क्या मिला इसके बदले मे तुम्हे। धन-दौलत। यश-वैभव। जीवन। आदर, मान, सम्मान। कलक।

**वरुण** अपराजिता, इतनी क्रूर न बनो। उचित को अनुचित न ठहराओ, तुम्हारे लिए मैंने अपना धर्म तक त्याग दिया, अन्यथा आज मैं तुम्हारे बीच न होता। तुम्ही बताओ मैं करता तो क्या करता ?

**अपराजिता** तुम भूल रहे हो। क्या तुम यह भी भूल गए कि अधर्म का अर्जन कभी नही फलता। स्वीकारो, मैं तुम्हार लिए सब कुछ त्याग रही हूँ। भवन, वाटिका, धन सब कुछ।

**वरुण** अपराजिता, मैं केवल तुम्हें चाहता हूँ, केवल तुम्हें, शेष कुछ नही। जानती हो तुम्हारे पिता की अन्तिम इच्छा क्या थी ?

अपराजिता तुम्हें क्या कहकर पुकारूँ युवक ! हाँ, तुमने कहा है जो भाग्य मे था सो हो गया । मैं भी यही कहती हूँ, अब सब कुछ भूल जाओ ।

[अपराजिता अपने साथियो सहित आगे बढ गई]

वरुण रुक जाओ अपरा, रुक जाओ । सौगध है तुम्हे । तुम मुझसे दूर नही जा सकती, नही जा सकती ।

कुछ युवक (वरुण को एक ओर धकेल देते हैं) जाओ विधर्मी, अपना जीवन चाहते हो तो यहाँ स भाग जाओ ।

वरुण नही जा सकता मैं । मैं अपराजिता से अलग नही रह सकता । मुगल सरदार ने मुझे वचन दिया है । अपराजिता मुझे अवश्य मिलेगी । कोई नही रोक सकता मुझे ।

युवक एक जाओ, कह दो अपने सरदार से । बता दो उसे, अपराजिता तुम्हे नही मिली और न मिल सकेगी ।

वरुण हाँ, मैं जाऊँगा, मुगल सरदार पर जाऊँगा, उसे वचन की याद दिलाऊँगा । (पागल-सा) अपराजिता ! मुझे अपराजिता चाहिए । कोई नही रोक सकता मुझे ।

अपराजिता नही जानती थी कि तुम ऐसा भी करोगे । लेकिन मैं तुम्हे इतना कष्ट न दूँगी ।

[सब अपराजिता की ओर देखते हैं]

• इतना अधर्म तुम मेरे लिए करोगे ? केवल मेरे लिए । नहीं, तुम ऐसा नही करोगे । आओ, मैं तुम्हे निराश नही करूँगी । लो अर्पित है मेरी देह । आओ वीर, अपनी वासना की प्यास बुझाओ ।

[विद्युत गति से एक कटार अपराजिता के सीने के पार जा चुकी थी । उसका निर्जीव शरीर वरुण के हाथो मे झूल गया ।]

वरुण नही, नही, तुम नही जा सकती अपराजिता ।

[वरुण पागलो की तरह चिल्ला उठता है]

# पद्मा के लाल कमल



चन्द्रशेखर

---

स्वर

मनीष गांगोली
आशुतोष मुखर्जी
लतीफ दादा
शहनाज हाशमी
अमिता मुखर्जी
जीनत

---

[पोस्टमैन कालबेल बजाकर डाक की सूचना देता है। कालबेल एक बार कम और दूसरी बार कुछ अधिक बजती है।

[प्रभाव : कालबेल का हल्के और लम्बे पाज से प्रभाव उभरता है।]

**अमिता** अरे ओ रामधर! बहरा हो गया है क्या? पोस्टमैन दो बार बेल दे चुका है। जाओ डाक ले आओ। सुनो! तकरार न करने लग जाना…

[प्रभाव : कालबेल का प्रभाव पुन: उभरता है।]

अब खड़े-खड़े मेरा मुंह क्या देख रहे हो?

[प्रभाव : जाने का और दरवाजा खुलने तथा बन्द होने का प्रभाव उभरता है।]

आशुतोष मुखर्जी अमिता ! भई पहले मुझे नाश्ता दे लो, डाक फिर देख लेना।

अमिता : नाश्ता लग चुका है···बल्कि ठंडा हो चुका है और आप हैं कि सारा घर सर पर उठा रहे हैं।

आशुतोष · तुम हिलती हो या तुम्हे भी उठाकर टेबल तक ले चलूं। जानती हो आज तीन अपील केसो मे आरगूमेंट्स हैं, दो मे एवीडेंसिज···दो मर्डर केस मे बेल्स करानी हैं···ओह इट इज़ टैरीबल···आफुली टैरीबल···

अमिता आप तो बच्चो को भी पीछे छोड़ गए···सारा नाश्ता ठंडा हो गया है, ठहरो गरम कर लाऊँ···

आशुतोष नो···नो···नो···नो ··तुम ज़रा हाथ लगा दो बस खुद ही गरम हो जाएगा।

[प्रभाव रामधर के आने का प्रभाव।

अमिता रामधर ! डाक इधर ले आओ। (आशुतोष से) मछली अभी गरम ही है···साग रहने दें···हाँ, रामधर ! साहब की गाड़ी साफ कर आओ। फौरन···इन्हें बहुत जल्दी है···(आशुतोष से) आप तो कुछ ले ही नही रहे···यह मछली कितने चाव से पकाई है मैंने···पता नही आपकी भूख को क्या हो गया है··· लें भी···यह लें···

आशुतोष अरे रे रे···यह सब कौन खाएगा···बस, यूं ही जाया जायेगा।

अमिता आप ज़रा-ज़रा सब चख ले और ज़रा मैं डाक आंख से निकाल लूं···(अपने आप से कहते हुए) रोहित का पत्र आने वाला था ···वह तो इसमे कही लगता ही नही···यह पत्र···यह मेरा है, यह भी मेरा है···यह भी···और यह···यह [illegible]··· कावेरी का है···कितने सुन्दर हैंड मे लिखा है···[illegible] मुखर्जी, बार-एट-ला···(लंडन) यह [illegible] है···किसी क्लाइट का लगता है···[illegible] मेरे नाम···।

आशुतोष : किसका हो सकता है? खोलो तो।

अमिता . काफी भारी है···

[प्रभाव : [illegible] प्रभाव।]

आशुतोष : कहाँ से है?···

अमिता : ढाका से···और [illegible]

आशुतोष कौन शहनाज ?

अमिता शहनाज हाशमी···

आशुतोष यू मीन···दैट रिफ्यूजी गर्ल···

अमिता हाँ···वही···वही शहनाज···जो रिफ्यूजी कैंप मे थी···उसे गये भी तो आज कई महीने हो गये हैं···यू नो हर केस···

आशुतोष अमिता डार्लिंग ! इस वक्त, मुझे सिर्फ वही केस याद है··· जिनमे मुझे पेश होना है···राइट ! हम चले ! लच के लिए मेरा इन्तजार न करना···

अमिता न आना हो तो रिंग कर देना···

आशुतोष (जाते-जाते···आवाज उभरती है) ओ-यैस ! ओ-यैम !

[प्रभाव दरवाजा खुलकर बन्द होने का प्रभाव उभरता है। कार स्टार्ट होने और जाने का प्रभाव उभरकर दूर जाता है।]

अमिता इतना लबा खत ! इसे बैडरूम मे आराम से पढना ही ठीक होगा। रामधर ! यह नाश्ता उठा लो। और हाँ सुनो ! बैडरूम मे ही मेरे लिए चाय लेते आना।

[चलने का प्रभाव]

शहनाज डियर···भगवान करे तू सुखी हो···

[कुर्सी घसीटने का प्रभाव।]

कैसा है यह रामधर !···कुर्सी पर दो-दो अगुल धूल चढी है··· लाख बार कहो तो एक बार सुनता है···

[खत खुलने का प्रभाव]

क्या लिखा है री तूने···

[पत्र का प्रभाव···शहनाज के स्वर मे उभरता है—]

शहनाज

रेस कोर्स
ढाका···

अमिता दीदी !

नमस्कार···यह रहा मेरा खत, इसे पाकर भी हैरान होगी और पढकर भी···रोज लिखने को होती थी···पर ऐसे लमहे नही जुटा पाती थी जिनमे लिखते वक्त खुद को आप से जोड सकूँ···अन्दर जो है उसे उलीचकर आप तक पहुँचा दूँ···

इतना भर गयी हूँ…इतना भर चुकी हूँ कि आज खुद को उँडेले बिना रह नही पा रही…मुझे ऐसे ही इस बोझ से नजात मिलेगी…मेरा मुक्ति-द्वार खुलेगा…

अमी दी ! आपके साथ कैम्प मे कटे दिन…आपने मुझ बिखरी हुई को कैसे-कैसे जोडा। खुद को मेरे साथ जोडकर मुझे खडा किया…जब मैं कैंप मे आयी थी…कितनी टूटी हुई थी। आपने मुझे मनोबल दिया…मेरे मॉरेल को जगाया…मुझमे जीने की ताकत भरी…यह जानते हुए भी कि मेरे में एक पाकिस्तानी दरिंदे का खून पल रहा है…उस खून से मुझे नफरत है…अमी दी ! यह जानते हुए भी आप ने मुझे उसे ढोने का बल दिया…मैं कितना चाहती थी उस गलत, गन्दे बोझ से मुक्त होना…मगर दी !…

मेरे मे उठने, चलने और जीने का साहस कभी जगता और कभी गिरता…मेरे मे पल रहा वह गन्दा खून कभी उबलता और फटने लगता…कभी ठडा होकर जमने लगता…मुझे लगता मेरा अपना गोश्त गल रहा है…इसी परेशानी मे मैं एक दिन कैंप से भाग गयी…और जा पहुँची गगा किनारे …खुद को मिटाने…आत्महत्या करने…माँ गगा की शान्त गोद मे मुँह छिपाने…

[गगा का प्रभाव उभरता है।]

छलछलाती गगा…पास से गुजर रहा स्टीमर…।

[स्टीमर का हार्न और पास से जाने का प्रभाव।]

जैसे गगा मे बाढ आ गयी…मैं छलाग लगाने को ही थी कि दी ! अमी दी ! आपने…आपकी आवाज ने मुझे फिर गिरते-गिरते बचा लिया…

अमिता : (आवाज़ दूर से आती है) शहनाज ! शहनाज ! रुको शहनाज ! शहनाज रुक जाओ ! (आवाज पास आ जाती है) रुक जाओ शहनाज ! यह क्या पागलपन है ? हूँ ! बोलो ! बोलो भी ! मैं पूछती हूँ यह क्या पागलपन है ?

शहनाज : (फफक-फफककर सिसकने लगती है)।

अमिता पगली ! चुप्प। सघर्षों से ऐसे भागा जाता है। तू तो बंगाल की बहादुर बेटी है… वग-माता की वग-कन्या।

शहनाज (सिसकियाँ उभरती हैं)।

अमिता शहनाज ! मेरी अच्छी शहनाज ! अच्छा बता···जो तुम्हारे साथ हुआ है···वह क्या अकेले तुम्हारे साथ ही हुआ है। बोल ! बोल ! बोल भी न। न जाने तुम्हारी जैसी कितनी बदनसीब और कमसन होंगी। क्या गगा मे डूबकर ही इस स्थिति से उबरा जा सकता है। क्या पूरी कौम को "हजारो बग-बेटियो को ऐसे डूबना होगा" समस्या का यही हल है क्या ?

शहनाज (सिसकियाँ उभरती हैं)।

अमिता मत रो। मत रो मेरी बहन ! तुमने कोई गुनाह नही किया है···तुमने स्वतन्त्रता की कीमत चुकाई है···यह बोझ भी उसी की एक किश्त है···अब तुमने खोकर भी पाया है·· बहुत कुछ पाया है···आत्महत्या से वह पाया भी अपाया हो जाएगा ···तुम जीत कर भी हार जाओगी···

तुम माँ के पास आयी हो न ! गगा माँ के पास। लो इसके पानी को छूकर उठो। उठो·· तूफान का सामना करने के लिए। वह सामने देख रही हो "उधर देखो। वह गगा मे कितना बडा गन्दा नाला···गटर मिल रहा है···ऐसे हजारो गटर इसमे मिलकर गगामय हो गये हैं·· माँ सभी को पवित्र बनाती है···

शहनाज ! तुम्हारे मे पल रहा गन्दा नापाक खून··· मगर इससे कही ज्यादा पाक पवित्र है माँ बनने का क्षण···उस क्षण यह गन्दा खून भी पवित्र बन जाएगा···गटर के पानी की तरह तुम्हारे मे···गगा की वेटी मे मिलकर पावन बन जाएगा···पावन बन जाएगा·· पावन बन जाएगा···

[फ्लैशबैक ओवर होने का प्रभाव।]

शहनाज दी ! अमी दी। तुम्हारे ये शब्द हमेशा मेरे कानो मे गूँजते रहते हैं···गगा मे मिल रहे गटर का वह दृश्य मुझे हमेशा एक रुहानी शक्ति देता है·· उसी के सहारे मैं इतने महीने आपके पास रही।

मेरी बग-भूमि स्वतत्र हुई·· आजाद बगला देश एक नये राष्ट्र के रूप मे उदित हुआ···भारत के शरणार्थी कैम्पस मे से हम बगाली अपने देश पलटने लगे·· मैं भी पलटी···अपने मनीष को ढूँढने···मुक्तिवाहिनी के उस वीर सेनानी को ढूँढने···मैं उसी के लिए जीवित थी···

दी ! मैं कई दिनो बाद ढाका पहुँची—अपने मुहल्ले आयी···ईंटो के ढेर मे अपना घर नही पहचान पायी···हाँ, कुछ जानी-पहचानी ईंटें जरूर पहचान गयी·· पता चला कि माँ पागल हो चुकी है·· और ठिकाने का कोई पता नही···पिता··· बशीर हनीफ छोटे भाई सब गोली का शिकार बन चुके हैं··· बडी बहन गुलनार···उसकी लाश एक बकर से मिली थी मनीष को···

और मनीष। कोई कहता जीवित है और कोई कहता है शहीद हो गया है···उसके घर गई···उसके पिता डॉ० गागोली यूनिवर्सिटी मे इतिहास के हेड थे···उन्हे एक दिन ले गये···और वह अब तक नही पलटे हैं···मनीष की माँ को गोली दाग दी गयी···उसकी तीन बहनें···कविता, चारु, अपर्णा, तीनो कहाँ गयी, कोई पता नही।

अभी दी ! मुझे अपने ही देश मे गैर समझा जा रहा है·· मेरे अपने सगे·· वाकिफ मुझे यही सलाह दे रहे हैं कि मैं जैसे-तैसे इस खून से·· मुक्त हो जाऊँ···अपने मे पल रहे गोश्त के नापाक लोथडे को निकाल फेंकूँ·· किसी भी घर मे दो-एक रात से ज्यादा रुक नही पाती···

मेरे जैसी सितमजदा लडकियो की सहायता के लिए एक सोशल गैर-सरकारी सस्था यहाँ है···कई दिनो से वहाँ पडी हूँ···कुछ दिन हुए मुझे परवेज मिला···परवेज···मेरा क्लास-फेलो·· उसने मुझे कई बार·· वू···किया था, खुद··· को एक्सप्रेस किया था···खतो से···मेल-मुलाकात से···उसे शिकायत थी कि मैं एक मुसलमान होते हुए भी क्यों एक गैर-मुसलमान से प्यार करती हूँ···अबकी मुझे मिला···तो *पहचानने से भी गुरेज करने लगा। अभी दी ! कुछ दिनो से यहाँ* मुक्तिवाहिनी के दस्ते देश के मुखतलिफ कोनो से आ रहे हैं··· रोज रेस कोर्स मैदान मे जुडते हैं और बग-बन्धु, बग-पिता मुजीब के आगे हथियार डालते हैं···मैं रोज वहाँ जाती हूँ··· मनीष का पता करने···दी ! मुझे विश्वास है कि मनीष मुझे इस गिरी हालत मे भी उठा लेगा···कबूल करेगा। मेरे साथ ही उस गन्दे और गैर खून को भी···क्योंकि वह जानता है— गटर गगा मे जाकर गगाजल बन जाता है।

दी ! यूनिवर्सिटी खुल गयी है ·मैं वहाँ गयी ·*मनीष का*

पता करने वैसे ही "जगन्नाथ हाल से गुजरी, मैं वैसे ही चलते-चलते रुक गई"'यही से मेरा और मनीष का परिचय हुआ था'''साल पहले यहीं पर रवीन्द्र कला सघ की ओर से रवीन्द्र सगीत सभा का आयोजन हुआ था। वी० सी० के ऑर्डर्स के खिलाफ हमने यह सभा की थी क्योकि उस बगाल मे रवीन्द्र सगीत पर प्रतिबन्ध था'''मनीष उस सभा में सबसे आगे था''' सभा हुई'''हजारो विद्यार्थी हाल मे भरे थे'''मनीष उठा एड्रेस करने के लिए'''तालियो से हाल फटने को हो गया'''

[प्रभाव तालियो का प्रभाव काफी देर तक उभरकर मन्द पड जाता है।]

मनीष : मित्रो ! बन्धुओ !

जाय बागला ! जाय बागला सास्कृति ! जाय रवीन्द्र ठाकुर ! मैं आप सबको इस साहस के लिए धन्यवाद देता हू''' वी० सी० महोदय के सख्त आर्डर्स के विरुद्ध भी आप रवीन्द्र कला सघ की इस सभा मे आये हैं यह बहुत प्रसन्नता का विषय है'''

मित्रो ! बंगाल के बँटवारे से रवीन्द्र का, बकिम का बँटवारा नही हुआ है'' माइकेल, मधुसूदन और द्विजेन्द्र लाल राय का बँटवारा नही हुआ है'''शरत् और नन्दलाल बसु का बँटवारा नही हुआ है' जमीन बँटी है' कला और सस्कृति नही'''हम अपने आप मे एक-दूसरे से अलग हुए ''अपने बीते कल में एक-दूसरे से टूटे नही'' वहाँ हम अब भी जुडे हैं''' ऐसे जुडे हैं कि कोई तोड नही सकता'''सम्पूर्ण बगाल की सस्कृति हमारी है'' कला, साहित्य, संगीत हमारा है'''रवीन्द्र हमारा है'''

[प्रभाव जोर-जोर से टियर गैस सेल छूटने का, भगदड का प्रभाव'' यह प्रभाव काफी देर चलकर फेड हो जाता है।]

शहनाज : अमी दी ! वी० सी० के कहने पर पुलिस हाल मे टियर-गैस छोडती है'''वहशियाना ढग से केनिंग करती है'''हाल मे लाइट ऑफ हो जाती है'' पुलिस मनीष को पकडने के लिए चप्पा-चप्पा छान डालती है'' हम कई लडकियाँ जैसे-तैसे निकलकर मैनगेट की तरफ सरकती हैं'' मैं केनिंग से लँगडाती

हूँ···भीड का एक रेला मेरे पर से गुजर जाता है··· कोई सबल हाथ मुझे वहाँ से खीचकर बाहर ले आते हैं और मुझे कार में धकेलकर ले उड़ते हैं। मैं अर्ध-चेतना-सी, नीम बेहोशी मे पडी कराह रही हूँ···फिर पता नही···चेतना कब लुप्त हो गई··· सुबह की ठण्डी हवा ने मुझे जगा दिया···वह एक मछेरे की झोपडी थी, उठकर बाहर आई···कार मे मनीष सोया पडा था·· सब कुछ धीरे धीरे याद आने लगा···

तभी सूर्य की पहली किरण फूटी और मेरा सोनार बागला महक उठा·· खिल उठा·· आसमान पक्षियो के कलरव से भर गया और पद्मा के सगीत से ताल मिलाने लगा···

[प्रभाव : पक्षियो की चहचहाट और नदी के कलकल का प्रभाव।]

मछेरे नावो पर बाहर निकलने लगे थे ··उनकी मीठी तान से पद्मा की सोई लहरें जाग रही थी···

[प्रभाव पुरुष-स्वर।]

हो रे माँझी रे·· हो रे माँझी···
हो रे माँझी
हैय्या हो हैय्या·· हैय्या···
हैय्या हो हैय्या ··हैय्या···
हो रे माँझी···। हो रे माँझी···

तभी चौंक पडी मैं·· मनीष उठ आया था···मुझे बुला रहा था।

मनीष शहनाज ! कहो। खूब नीद आई न ?···हूँ···अभी भी आँखो मे सोजिश लग रही है·· लाल···सोनार आँखें···मेरे सोनार बागला देश की आँखें···

शहनाज : ओह ! मनीष तुम्हे तो कोई चोट नही आई न ! अल्लाह तुम्हारा लाख शुकर है, मेरे लिए तुमने खुद को जोखिम मे डाला···

[प्रभाव : नारी-स्वर मे।]

पूर्वेर आकाश सूर्य उठे छे
आलोके आलोक मय

[प्रभाव नारी स्वर मे।]

पूर्वेर आकाश सूर्य उठे छे
आलोके आलोक मय
*जय जय बागला देश*
जय जय बागला देश ।

मनीष शहनाज ! वह देख रही हो । बग-बेटी·· किसी मछेरे · माही-गीर की बेटी नाव खेते हुए पूर्व मे चढ आए सूर्य का, सूर्य के प्रखर प्रकाश का स्वागत कर रही है· वह सूर्य जो आज मुजीब भाई मे उगा है वह प्रकाश जो बगाल सस्कृति का जागरण बनकर फैल रहा है

शहनाज ! देख रही हो· एक और नाव उस नाव के साथ मिल गई है · वह माहीगीर छोकरा अपनी नाव को उस नाव से बांधकर उस मछेरन के पास चला गया है उसके हाथ से चप्पू ले लिया है वह मछेरन अपने बाल खोलकर कैसे खिलने लगी है · जैसे प्रकृति बाला पद्मा मे विहार के लिए उतर आई हो वह हाथ-मुंह धोकर उठी है सूर्य की सुनहरी किरणो म उसका ताबई चेहरा कैसे चमक उठा है ।

देखो ! देखो शहनाज ! वह मछेरा उसकी ठुड्डी को उठा कर उसके चेहरे म क्या पढ रहा है उसकी आँखो मे चढ़ते सूर्य की लाली देख रहा है उसकी गुनगुनाहट गूंज उठी है·

[प्रभाव पुरुष-स्वर मे]

आमार सोनार बांगला देश
अमितोमाय भोला बाशि
*आमार सोनार बांगला देश ।*

[स्वर मन्द पडने लगता है ।]

शहनाज ! कहाँ खो गई हो शहनाज ! देखो ! दोनो नावें जा रही हैं · *पद्मा की तरल सोन जल धारा मे प्रकृति और पुरुष का मिलन हो रहा है । शहनाज ! शहनाज ! ऐ शहनाज !*

शहनाज ओह मनीष । मैं एक हो गई थी·· उस मछेरन से एक हो गई थी ··और एक क्षण के लिए लगा था तुम ही मेरी आँखो म झांक रहे हो । तुम ही वही मछेरे हो ।

मनीष शहनाज, मेरी ओर देखो । देखो भी । प्लीज· देखो । बांगला भूमि के सुरमई आकाश-सी तुम्हारी गहरी नीली आँखें · उनमे

लाल डोरे···मानो पद्मा से असंख्य लाल कमल खिल आए हो···

शहनाज, तुम्हारी आँखो मे वही सूर्य चढ आया है··· उसी का सोनार प्रकाश मेरी आँखो मे समा रहा है···तुम्हारी आँखो का सूर्य पद्मा मे खिल उठा है···केले के हरे पत्तो पर विछल रहा है।···नारियल की तराशी हुई छिनराई शाखाओ मे से छन-छनकर आ रहा है। अमराइयों मे से धूप गध की तरह उठ रहा है···धान के खेतो मे ज्योति लौ बनकर फैल रहा है··· पटसन के फूलो मे गधिया रहा है···

शहनाज ! मैंने तुम्हारी आँखो मे चढते लाल सूर्य को देखा है···तुम्हारी आँखे···ज्योति कलश-सी आँखे···जिनमे लाल कनेर खिल आए हैं···केसर कलियाँ मुस्करा उठी है··· सुनहरी शैवाल···असख्य लाल कमल लहलहा उठे हैं···

ओह ! शहनाज ! तुम्ही मेरी सोनार-भूमि हो। शहनाज तुम्ही मेरा सोनार बाँगला हो।

शहनाज, तुम्हारी शंखपुष्पी-सी आँखो मे चमकते ये मोती दाने···शहनाज ! मैं इन्हे चूमकर शपथ लेता हूँ··· शहनाज ! मैं शपथ लेता हूँ···तुम्ही मेरी प्रकृति हो···मेरी वह मछेरन हो · जिसमे तुमने खुद को पाया था।

[प्रभाव दूर अजान का स्वर उभरता है।]

शहनाज मनीष, नमाज का वक्त हो गया है···इस पवित्र-पाक लमहे मे···मैं तुम्हारी बाँहो मे बँधी तुम्हे समर्पित हूँ। मनीष···तुम्हे समर्पित हूँ···मैं···मेरा सब···मैं पूरी-की-पूरी तुम्हे समर्पित हूँ···विसर्जित हूँ···शालिग्राम पर तुलसी-पत्र की तरह विसर्जित हूँ···

मनीष : शहनाज, तुम मेरी प्राण-शक्ति हो। मेरा बल-मनोबल हो। मेरी नसो का···शिराओ का रक्त-ज्वार हो···सारे बाँगला मे जगे सास्कृतिक जागरण का शखनाद हो···जयघोष हो···

यह क्षण···शहनाज ! यह क्षण मेरे जीवन का पावनतम, मधुरतम क्षण है···शहनाज ! अपने हाथो से माँ पद्मा का अंजुली-भर पानी मेरे हाथो म डालो···मुझे अपनी अजुली से पिलाओ।

[प्रभाव : पानी के अंजुली मे भरे जाने का प्रभाव उभरता है।]

शहनाज, यह पानी नही तुम हो शहनाज ! तुम हो···यही हमारा पाणि-ग्रहण है ··इसी पानी का सिंदूर तुम्हारे सीमात में·· तुम्हारे मांग मे भरता हूँ···माँ की साक्षी मे तुम्हें स्वीकार करता हूँ शहनाज···!

आज से मेरा सकल्प·· विनियोग शक्ति···सब कुछ तुम हो शहनाज ··।

लतीफ (दूर से आवाज आती है।) मनीष बाबू·· मनीष बाबू···जल-पान के लिए उठ आइए। यही झोंपडी मे आ जाएँ···

मनीष लतीफ दादा ! हम आ रहे हैं। चलो शहनाज ! फिर देर हो जाएगी · ढाका भी पलटना है। उठो ! लो हाथ पकडो। हाँ !

शहनाज अब जो हाथ पकडा है···पकडे रखिएगा।···

मनीष जीवन भर···

लतीफ आएँ मनीष बाबू···

[प्रभाव स्त्री-स्वर मे।]

ललित लवग लता परिशीलन कोमल मलय समीरे।
मधुकर निकर करबित कोकिल, कूजत कुज कुटीरे ॥

मनीष लतीफ दादा ! यह किसका स्वर है ?

लतीफ : मेरी बेटी जोहरा का·· अन्दर आपके लिए जलपान लगा रही है···

शहनाज जयदेव का यह गीत·· मधुरता का अजस्र स्रोत···

मनीष यह किसी कॉलेज मे नहीं पढ़ी बिटिया·· फिर भी उसे पूरा गीत गोविन्दम् याद है···आप अन्दर चलिए···

मनीष दादा, तुम्हारी कुटिया स्वर्ग है···यह कीर्तन, प्रार्थनायें·· दीये ·· कोने मे चैतन्य महाप्रभु की तस्वीर···जल रही ज्योति··· धूप-दीप नैवद्य···

सस्कृति से, लोकगीतो से, पहरावे से नफरत करो·· इस्लाम मेरा मजहब है···और चैतन्य, उसके राधा-कृष्ण मेरी संस्कृति है। मेरे देश और मिट्टी की सस्कृति इन नदियो, कछारो, घाटो, ताल-तालावो, अमराइयो, धान और पटसन के खेतो, नारियल और केले के झुडो की सस्कृति है।

मनीष दादा, तुम इतनी बातें जानते हो ?

लतीफ हम मछेरे क्या जानें सस्कृति, धर्म, सभ्यता की बारीक बातें··· मगर ये सब तो हमे विरासत मे मिला है···कुछ दिन हुए हमारे कीर्तन मे रजाकार आया था···उसने साहब बडा हगामा किया···बोला यह सब कुफर है···अरी जीनत बेटी ! आ गई तू···शीघ्र परस दे···ला मैं परसता हूँ·· तू ही सुना उस हगामे की बात···मनीष बाबू ! अकेली जीनत बेटी ने उस रजाकार को चुप करा दिया···बता बेटी ! बता ! ला मुझे दे वह केले के पत्र। शहनाज बेटी ! यह पत्ते हमारी थालियाँ हैं···यह केले के फल···मछली···चावल···यह स्वीकार करें।

शहनाज जीनत, बताओ तुमने क्या कहा ?

जीनत दीदी, वह तो बडी लम्बी-ऊँची बातें करता था···कहता था··· लुगी-शलवार पहनो···उर्दू बोलो···इकबाल और गालिब को पढो···टैगोर···काफिर शायर था···

मनीष तुमने क्या कहा ?

जीनत बस यही कि इस्लाम मे कहाँ है···कुरान मे कहाँ है कि अपनी मातृभूमि को प्यार न करो···गगा, जमुना, पद्मा के गीत न गाओ। हमारे पुरखे जो बोलते, पहनते, गाते आए हैं वह न करो।

टैगोर के बिना बगाल कहाँ···जयदेव, विद्यापति, बकिम, नजरुल, शरत् के बिना कैसा बगाल···हम इस्लाम के नाम पर अरब की पोशाक, बोली और रहन-सहन को नही मानेंगे··· अरब की रेत के लिए हम अपनी गगा, जमुना, पद्मा नही छोड सकते।

शहनाज बहुत खूब ! बहुत खूब जीनत···कहाँ से सीखी हैं इतनी बातें···

जीनत . और कहाँ से···दादा से···पद्मा के गीतो और लहरो से··· नारियल, केले और आम के पेडो से···यह सब क्या सीखने की

लतीफ मनीष बाबू ! आपने तो कुछ लिया ही नहीं···जीनत बेटी ! शहनाज को साग और दो।

जीनत दीदी ! थोडा और लीजिए।

शहनाज बस जीनत ! सुनो, मेरे साथ चलोगी ढाका···ये सब बातें सुनाने के लिए···

मनीष दादा, हमे आज्ञा दें·· देर हो रही है···आपने हमे आश्रय दिया·· हम आपके बहुत आभारी हैं···नामस्कार।

लतीफ नामस्कार।

शहनाज सलाम दादा !

लतीफ वालेकम इस्लाम बेटी ! अरे जीनत बेटी, अपनी दीदी को सलाम बुलाओ।

जीनत : सलाम दीदी ! सलाम दादा !

मनीष-शहनाज सलाम ! सलाम !

लतीफ खुदा हाफिज !

[प्रभाव कार स्टार्ट होने और चलने का प्रभाव···उभर-कर पीछे चला जाता है और बराबर चलता रहता है।]

मनीष क्या सोच रही हो ?

शहनाज जो आज अचानक हो गया···मैं तो उसे कबूल करती हूँ···पर घर वाले भी·· तुम्हारे और मेरे···दोनो·· क्या दोनो कबूल करेंगे·· तुम हिन्दू, हम मुस्लिम···

मनीष शहनाज ! नाज ! नाजी ! अब इसी नाम से बुलाऊँगा·· हूँ··· नाजी !

शहनाज हाँ···

मनीष : नाजी ! हम हिन्दू और मुसलमान बाद मे हैं···पहले हैं··· बगाली। धर्म जुदा है···कोई बात नही···कल्चर तो एक है··· हम कहीं पर तो बहुत गहरे जुडे हैं···एकदम अटूट···तुम्हे, मुझे ···इस गगा···और पद्मा ने जोडा है···हम रवीन्द्र और बकिम से एक हैं···चैतन्य और विद्यापति से एक हैं···हाँ सुनो। तुमने माँ पद्मा की गोद मे मुझे कहा था कि मैं शालिग्राम पर तुलसी-पत्र की तरह विसर्जित हूँ·· कहा था न !

शहनाज : हाँ, कहा था।

मनीष : एक मुस्लिम लडकी ने कहाँ से सीखा यह।

शहनाज . अपने घर से···मेरे घर मे तुलसी चौरा है···माँ वही···रोज

दीपक जलाती है…उसी मे शालिग्राम की प्रतिमाएँ हैं…उन पर चन्दन और तुलसी-पत्र चढ़ाती है और उसी के पास बैठकर वह नमाज भी पढ़ती है।

मनीष शहनाज ! यह धर्म और कल्चर का सिंथेटिक प्रासेस है…एक होने की प्रक्रिया…धर्म संस्कृति का, कल्चर का विरोधी होकर नही चल सकता। जहाँ वह चला है…वही दंगे-फसाद हुए हैं। हमारी यहाँ की प्राब्लेम यही है…इस्लाम के अन्धे ठीकेदार यहाँ इस्लाम के नाम पर अरब कल्चर ठूँस रहे हैं…हम उसी के विरोधी हैं…नाजी ! दो अलग-अलग धर्मों की एक संस्कृति हो सकती है…मेरी बात समझ रही हो न !

शहनाज हाँ !

मनीष नाज ! इण्डोनेशिया ' वहाँ का धर्म इस्लाम है मगर संस्कृति भारतीय है…वे राम को पूजते हैं, राम की लीलाएँ करते हैं, रामायण का पाठ करते हैं…और फिर भी वह मुसलमान हैं… वहाँ धर्म और कल्चर मे कोई विरोध नही…क्योकि अरब की गरम जलती रेत वहाँ नही पहुँची है…मेरी सोनार भूमि मे यह रेत उड़ाई जा रही है…नाजी…हमे उस रेत का विरोध करना है…उस रेत को गगा, जमुना और पद्मा मे बहाना है।

शहनाज . मनीष ! मेरे मे साहस आ गया है…मैं तुम्हारा नाम लेकर खड़ी हो सकती हूँ…तुम्हे लेकर निडर होकर चल-फिर सकती हूँ… मैं घर जाते ही अपना निर्णय बता दूँगी…मुझे रास्ते मे ड्राप कर देना। खुद घर चली जाऊँगी…तुम कहाँ जाओगे…

मनीष . सीधा यूनिवर्सिटी नही जाऊँगा…शायद मेरे वारंट्स निकल गए हो…मैं किसी मित्र के घर ही जाऊँगा…तुम्हे बीच मे मिलता रहूँगा… नाजी ! जो आज हुआ है, वह जीवन-भर नही भूलूंगा …मैं अब अकेला नही रहा…तुम मेरे मे हो…मेरे साथ हो… और तुम…

शहनाज : मैं…मैं…तुम्हे अपने साथ लिये जा रही हूँ…केवल तुम्हे…खुद को तुम्हे देकर…तुम्हे लिये जा रही हूँ…

[प्रभाव : कार रुकने का प्रभाव। दरवाजा खुलने-बन्द होने और कार पुनः चलने का प्रभाव।]

मनीष . नाजी, मेरे मे देखो। हूँ घबराना नही।

[फ्लैशबैक ओवर होने का प्रभाव।]

शहनाज अभी दीदी। इसके बाद मनीष मुझे नही मिला…आपने कई बार मनीष के बारे मे जानना चाहा था…यह था जो मेरे और मनीष मे घटा था और हमे बाँध गया था, जोड गया था, एक कर गया था।

जगन्नाथ हाल से चलकर मैं आगे आती हूँ गर्ल्ज होस्टल की ओर एक मोड पर आकर मेरे पाँव थर्राने लगते हैं दीदी! आँखो के आगे अधकार-ही-अधकार…दिल सिंक करने लगता है…अल्लाह करे जमीन फट जाये और मैं यही गरक हो जाऊँ…कुछ महीने पहले…यही सामने से एक जीप आकर मेरे पास रुकी थी…

[प्रभाव जीप के आने का और जोर से ब्रेक लगाकर रोकने का प्रभाव…जीप का इजन धीरे-धीरे चलता रहता है।]

उसमे बैठे फौजियो को देखकर मैं भाग उठी…वह भी जीप से उतरकर मेरे पीछे भाग उठे…

[प्रभाव दो-चार फौजियो के भागने की बूट-चाप और शहनाज के स्वर मे चीखने-चिल्लाने का प्रभाव।]

दीदी! मैं चीखती रही… वे जालिम मुझे घसीटकर जीप तक ले गए…उसमे लाद दिया…मुँह बन्द…बँधे हुए हाथ-पैर, जीप गुर्राती हुई भाग निकलती है…

[प्रभाव जीप के टॉप गियर पर चलने का प्रभाव उभर-कर बन्द होता है।]

दीदी, जानती हो जीप कहाँ रुकी…लतीफ दादा की झोपडी के सामने…जहाँ मैंने मनीष का वरण किया था…जैसे ही लतीफ दादा बाहर निकले, उन पर गोली दाग दी गयी—

[गोली की रैपिड फायरिंग का प्रभाव।]

उनके दो-तीन साथियो को गोली का निशाना बनाया गया…और आँख झपकते ही उन्हे पद्मा मे बहा दिया गया… एक सिपाही अन्दर से जीनत को पकड लाया…हम दोनो को उसी झोपडी मे ले जाया गया…एक सिपाही ने बूट मारकर चैतन्य की तस्वीर तोड दी…दीपक बुझा दिया…और फिर मेरे

और जीनत पर क्या बीती···मेरे अल्लाह !! तेरी दुनिया मे इतना जुल्म···उन भूखे कुत्तो ने हमे नोच डाला·· मैं कब बेहोश हो गयी·· कुछ पता नही···सुबह···आँख खुली·· पास ही जीनत की लाश पडी थी···शराब की खाली टूटी बोतलें··· भन्नाती हुई मक्खियाँ·· यह सब देखकर मैं फिर बेहोश हो गयी ···मैं बेहोश हो गयी।

दीदी !

उस रोज जब मुझे होश आया तो मैंने खुद को पास के मछेरो की बस्ती मे पाया। और उन्ही के साथ भागकर मैं कलकत्ता आयी। जब मुझे होश आया तो मैं गर्ल्स होस्टल मे थी, कई जानी-पहचानी लडकियाँ मुझे घेरे थी···वार्डन भी मेरी परिचित थी। वही डॉ० आयी। उसने मुझे फौरन हॉस्पीटल भिजवा दिया, मेरे अन्दर गन्दे खून का जो एक कतरा जमकर बडा हो रहा था, अब वो फूटने को था···सभी की आंखो मे मेरे लिए एक सवाल उठता···वे खुद ही उसका जवाब पा लेती··· एक खामोश हमदर्दी, मैं जिसे शर्मिन्दगी की इन्टेन्सिटी मे न तो देख पाती और न ही कबूल कर पाती···

दीदी ! हॉस्पीटल मे मेरी जैसी सैकडो बल्कि हजारो सितमजदा थी···हैं, जो पशुता का शिकार बनी थी···और किसी और के पाप के बोझ से दब रही थी, पता नही उन्हे भी किसी मनीष का इन्तजार था। दीदी, मैं तो मनीष की इन्तजार मे जी रही थी और वह भी एक दिन कयामत बनकर टूटा··· मुक्तिवाहिनी मे शहीद होनेवालो की लिस्ट छपी थी···दी ! दी ! उसमे मेरे मनीष का भी नाम था···पढते ही जैसे मैं पिघलते, जलते शीशे के टब मे गिर गयी।

[प्रभाव जोरे से बिजली कडकने का प्रभाव।]

दी ! यह बिजली मुझ पर गिरी थी, वह गन्दा खून अब मेरी नसो मे बारूद बनकर ब्लास्ट होने को था···मेरे मे पडा, वह डायनामाइट फटने को था, वह टाइम बम्ब···गन्दे गोश्त का टाइम बम्ब मेरे मे धुआँ छोडकर एक दिन फट गया···फट गया एक दिन···

दीदी, यहाँ रोज ही ऐसे टाइम बम्ब फटते हैं···यह

धमाके होते हैं, बागला की हजारों बहू-बेटियों के अन्दर गन्दे खून की माइन्स बिछा दी गयी हैं जो आए दिन एक्सप्लोड होती रहती हैं। शहरों और गाँवों में यह धुआँ फैल रहा है। घुटन बढ रही है, हमारे लिए लोगों के पास हमदर्दी है, ध्यान है···चन्दा है···मगर वह हौसला कम है, जो हमें इस धुएँ से निकाल ले···

अमी दी!

हममें से निकले ये गन्दे लोथड़े जोकों की तरह हम ही चूस रहे हैं। हमारे गन्दे खून को चूस रहे हैं। कई बार एहसास होता है, यह हॉस्पीटल एक बड़ा गन्दगी का ढेर है, जिसमें गन्दे बीजों के बेशुमार बेनाम कुकुरमुत्ते उग आये हैं···इनकी देखभाल के लिए कई देशी-विदेशी संस्थाएँ यहाँ काम कर रही हैं···एक गन्दी नसल, बेनाम पीढ़ी की परवरिश की चिन्ता ज्यादा है, जिस ढेर से वे उगे हैं, वह तो गन्दगी का ही ढेर है, और मैं उस ढेर का ही एक निहायत गन्दा हिस्सा हूँ···

दी, मेरे जिस्म से जो एक और नन्हा जिस्म उग आया है, वह मुझे धतूरे के जहरीले फूल-सा लगता है, मेरे दिल में उसके लिए सिवाय नफरत के और कुछ नहीं···सूखी छाती को जब वह चूसता है तो वह पिघलने की बजाय और पथरा जाती है, वह ममता की लाश से उगा है। उसके लिए दूध कहाँ से फूटे··· कहाँ से फूटे···

दी, मैं खड़ी हो सकती थी, मनीष के सहारे···मुझ अपाहिज को वह जरूर उठा लेता···मेरी बैसाखी बन जाता··· वह इस धतूरे के फूल को भी भगवान शकर का पूजा-पुष्प मान लेता· 'कल रात यहाँ भयकर तूफान आया था···

[प्रभाव तूफान का, बिजली और वर्षा का प्रभाव। तूफान का प्रभाव कुछ मन्द होकर चलता रहता है।]

दीदी! जैसे रोज़ें कयामत आ गया हो, उधर वह नन्ही जान भूख से कुलबुला उठी।

[प्रभाव . बच्चे के रोने का प्रभाव।]

दीदी! दिल में आया कि इसका गला घोट दूँ···मगर औरत हूँ, गदे खून की एक बूँद को ढोने की गुनहगार हूँ···और

गुनाह कैसे करती? यह गोश्त का पुतला सारी जिंदगी मुझसे चिपका रहेगा। मैंने इससे नजात पाने के लिए खुद को खत्म करने का फ़ैसला कर लिया'''उसे वही रोता छोड़ उठी'''

[प्रभाव बच्चे के रोने का प्रभाव।]

हॉस्पीटल की टॉप स्टोरी की ओर बढ़ चली।

[प्रभाव सीढ़ियाँ चढ़ने की आहट उभरती है।]

ऊपर पहुँच गयी'''तूफान की साँस कुछ मन्द पड़ रही थी।

[प्रभाव तूफान का हल्का प्रभाव और भी हल्का होकर धीरे-धीरे फेड हो जाता है।]

मैं नीचे कूदने के लिए स्पॉट ढूंढ ही रही थी कि मुझे उस गंदे खून की आवाज़ ने रोक दिया।

[प्रभाव बच्चे के रोने का प्रभाव।]

पीछे मुड़कर देखा तो डॉ० शमीम बच्चे को गोद मे लिये खड़े थे। दीदी, उन्हे देखकर मेरे मे जैसे कूदने की गैबी ताकत आ गयी'''कूदने ही को थी कि डॉ० शमीम ने मुझे आवाज दी'''

डॉ० शमीम शहनाज! मैं तुम्हे रोकने नही आया हूँ'''जरूर कूदो, मगर इस नन्ही जान को लेकर'''इसको साथ लेकर कूदो'''साथ लेकर।

शहनाज (फफकने का स्वर)

डॉ० शमीम शहनाज! समस्या का हल क्या खुदकशी से हो जाएगा? बोलो! तुमने, हम सबने सोनार बांगला का स्वप्न पूरा करने के लिए कितना खून दिया है। हमारी नदियो मे जितना पानी है उससे भी ज्यादा खून दिया है। हमे अभी और खून देना है'''तुम्हे देना है'''इस बच्चे को अपने खून पर बड़ा करना है।

शहनाज. डॉक्टर! डॉक्टर! एक गंदी नस्ल को पैदा करने का गुनाह मुझसे हुआ है। उसकी परवरिश का गुनाह मैं नही कर पाऊँगी। डॉक्टर'''मुझसे यह नही होगा'''नही होगा डॉक्टर!

[सिसकते हुए।]

**डॉ० शमीम** शहनाज ! वक्त का यह बहुत बडा चैलेज है, गदे खून की एक नस्ल उग आयी है। सोनार भूमि मे···इसे उखाडने के लिए हमे अपनी मिट्टी भी उखाड फेकनी पडेगी···यह हम नही कर सकते···शहनाज हमारी मिट्टी···सोनार मिट्टी बडी पवित्र है···गदे बीज को भी पवित्र अकुर देती है।

**शहनाज** डॉक्टर ! *सारा देश अभी ऐसा सोचने के मूड मे नही है। और* मैं इसका इतजार नही कर सकती।

**डॉ० शमीम** तुम्हे इतजार नही करना होगा, अपने पर पूरी जिम्मेवारी लेकर मैं यह बच्चा तुम्हे सौप रहा हूँ, मैं इस गदे खून को सोनार मिट्टी के सस्कारो से पवित्र बनाऊँगा···जुल्म का यह खून मेरे सस्कारो से शुद्ध होकर वक्त आने पर उसी जुल्म के खिलाफ लडेगा।

[बच्चे के रोने का प्रभाव।]

शहनाज ! लो यह बच्चा लो, इसे कबूल कर लो ! अपना समझकर पालो। देखो पौ फट रही है, सूरज···लाल सूरज···पूरब का लाल सूरज चढने को है·· उसकी पहली किरण इस पर पडेगी तो यह पवित्र हो जाएगा·· मैं इसको, पद्मा मे खिले लाल कमल को देख रहा हूँ···यह लाल कमल है···

शहनाज ! मैं नीचे जा रहा हूँ···स्वस्थ होकर नीचे चली आना। तब मैं तुम्हे माँ के पास ले चलूँगा···

[जाने का प्रभाव।]

[प्रभाव अमिता के स्वर मे ईको होकर उभरता है।]

**अमिता** *शहनाज ! यह गदा खून··* माँ बनने के पवित्र क्षण मे शुद्ध हो जाएगा। यह गदा रक्त तब शुद्ध हो जाएगा, तब शुद्ध हो जाएगा।

[फ्लैशबैक ओवर होने का प्रभाव।]

दीदी ! यह तुम्हारी आवाज थी। जैसे ही लाल सूर्य की पहली किरण उस नन्ही जान पर पडी, वैसे ही आपकी आवाज भी मेरे कान मे पडी। उस किरण-धुले बच्चे को लेकर मैं नीचे गयी···डॉक्टर शमीम मेरा इतजार कर रहे थे। हम कार मे *बैठकर माँ के पास गये···माँ ! पद्मा माँ ! स्नान किया···बच्चे*

को नहलाया···लगा उसका शाप बह गया है···माँ ने वह कलुष धो डाला है···अपने में ले लिया है। सच मानना दीदी! उससे तब मुझे कमल की गंध आने लगी, डॉक्टर शमीम ने उसे गोदी में ले लिया और उसका नाम रखा···लाल कमल··· मुझे लगा पास की झोंपड़ी से मनीष निकल आया हो·· और कह रहा हो, शहनाज, तुम्हारी आँखों में जो लाल कमल मैंने देखे थे, यह वही एक लाल कमल है, वही एक लाल कमल है··· और इस कमल में मैं भी हूँ·· दीदी, लगा मैंने मनीष को भी पा लिया हो।

दीदी! घर आते ही सबसे पहले आपको लिखने बैठी हूँ, उत्तर आने पर बराबर लिखती रहूँगी।

आपकी

शहनाज

# मन्दिर की जोत



चिरजीत

---

**पात्र-परिचय**

| | |
|---|---|
| शोभा | १२ वर्षीया लडकी। स्कूल मे पढती है। |
| बूढा | शोभा का बाबा, जो बुढापे के कारण एक तरह से अपाहिज हो चुका है। आयु लगभग ७० वर्ष। |
| मुरलीधर | शोभा का पिता, नगर का बहुत बडा व्यापारी। आयु कोई ४८ वर्ष। |
| कौशल्या | शोभा की माँ, घर के सुख और ऐश्वर्य मे लीन। आयु कोई ४२ वर्ष। |
| प्रकाशचन्द्र | शोभा का बडा भाई। आयु २० वर्ष। |
| रामू | घर का नौकर, आयु १६ वर्ष। |
| विजय | पडोसी लडका। आयु लगभग १८ वर्ष। |
| चार लडकियाँ | कथा गीत की गायिकाएँ। |
| दुर्गावती | गोंडवाना की वीर रानी। |
| लक्ष्मीबाई | झाँसी की रानी, सन् ५७ की सेनानी। |
| मुंदरा | रानी लक्ष्मीबाई की सखी। |
| सैनिक | राजपूत योद्धा। |
| गगादेवी | शोभा की स्वर्गीया दादी। |

---

**स्थान** दिल्ली मे लाला मुरलीधर की कोठी के पिछवाडे का बगीचा।

**समय** सितम्बर १९६५ की एक शाम। पाँच बज चुके हैं।

## दृश्य एक

[बगीचे की बाईं ओर कोठी का वह दरवाज़ा है, जिससे घर के लोग बगीचे मे आते-जाते है। दाईं ओर महात्मा गाधी की मूर्ति से सज्जित एक छोटा-सा मन्दिर है, मन्दिर के सामने सगमरमर की एक समाधि बनी है जिस पर मोटे अक्षरो मे लिखा है—"१९४२ के स्वतन्त्रता-सग्राम की वीरागना मातेश्वरी गगादेवी का पुण्य-स्मृति-मन्दिर। सामने की ओर बगीचे की तीन-चार फुट ऊँची दीवार के उस तरफ बस्ती की गली है, जिसका बिजली का एक खम्भा दिखाई देता है।

जब पर्दा उठता है तो कोठी के दरवाज़े से रामू बूढे बाबा को पहियो वाली कुर्सी प' बैठाकर बगीचे मे लाता है। बुढापे के कारण बूढा चल-फिर नही सकता, लेकिन उसके चेहरे पर तेज है। उसने खादी के कपडे पहने हुए है।]

बूढा राम, अब मैं यही बगीचे मे रहूँगा। अभी धूप है। ज़रा मुझे अखबार ला दे।

रामू अभी लाया, सरकार। (जाते-जाते रुककर जेब से एक चिट्ठी निकालता है।) सरकार, आज घर से यह चिट्ठी आई थी।

बूढा तेरे घर से ?

रामू जी हाँ। ज़रा देखिए, क्या लिखा है ? तब तक मैं अन्दर से अखबार लाता हूँ।

[कोठी मे जाता है। बूढा ऐनक लगाकर रामू की चिट्ठी पढता है।]

बूढा : (चिट्ठी पढकर) धन्य है रामू का यह परिवार ! गरीब होते हुए भी कितना देश-प्रेम है इन लोगो मे !

[तभी रामू अन्दर से अखबार लेकर आता है।]

रामू : यह लीजिए अखबार, सरकार !

बूढा . (अखबार लेकर) रामू, क्या तुम तीन भाई हो ?

रामू जी हाँ।

बूढा . अरे, पहले तूने कभी बताया नही कि तेरा बडा भाई फौज मे है।

**रामू** जी हाँ, बडा भाई फौज मे है । क्या यह उसी की चिट्ठी है ?

**बूढा** नही, यह तेरे मँझले भाई की चिट्ठी है ।

**रामू** वह मेरठ के एक दफ्तर मे चपरासी है ।

**बूढा** नही, अब वह भी फौज मे भर्ती हो गया है । उसने लिखा है— "दुश्मन ने हमला करके हमारे देश की आजादी को खतरे मे डाल दिया है । देश की आजादी और अखण्डता की रक्षा करना हर भारतवासी का कर्तव्य है । उसी कर्त्तव्य की पुकार पर मैं बडे भैया की तरह फौज मे भर्ती हो गया हूँ । कोई चिन्ता न करना । हम राजपूत लोग देश के लिए मरना जानते हैं ।"

**रामू** ओह, दोनो भाई फौज मे भर्ती हो गए, मैं ही पीछे रह गया ।

**बूढा** लेकिन तू तो अभी बहुत छोटा है ।

**रामू** हाँ, सरकार, इसीलिए मेरा मन छटपटा रहा है । अच्छा, मैं अन्दर जाकर चाय बनाऊँ । मालिक के आने का समय हो गया । आते ही चाय माँगेंगे ।

[कहता-कहता कोठी के अन्दर चला जाता है ।]

**बूढा** (जाते हुए रामू को बडे प्यार से देखते हुए) एक ओर यह गरीब नौकर है, जो देश पर अपने प्राणो की वलि चढाने को छटपटा रहा है और दूसरी ओर हैं मेरे इस अमीर घर के लोग, जिन्हे देश की नही, अपने सुख-आराम और रुपये-पैसे की ही चिन्ता रहती है । एक दिन यही घर स्वतन्त्रता सग्राम का शिविर बना हुआ था । गगादेवी की यह समाधि · !

[कहता-कहता आह भरकर अपनी पत्नी की समाधि की ओर देखता है । फिर अखबार पढने लगता है । तभी सामने गली मे बहुत-से लडके-लडकियाँ झण्डा-गीत गाते हुए जुलूस की शक्ल मे सामने से गुजरते हैं । बगीचे की दीवार के अन्दर से उनके केवल झण्डे ही दिखाई देते हैं । बूढा अखवार छोडकर मुग्ध भाव से एकटक उधर ही देखता है ।]

**झण्डा-गीत**

विजयी विश्व तिरगा प्यारा,
झण्डा ऊँचा रहे हमारा ।

सदा शान्ति सरसाने वाला,
प्रेम सुधा बरसाने वाला,
वीरो को हरषाने वाला,
मातृभूमि का तन-मन सारा।
झण्डा ऊँचा रहे हमारा।

[झण्डा-गीत गाते हुए बच्चे दूर चले जाते है। बूढा भाव-विभोर होकर अपने आप ही बडबडाने लगता है।]

**बूढ़ा** (स्वगत) झण्डा ऊँचा रहे हमारा ! हाँ, आज प्रत्येक भारतवासी को यही प्रतिज्ञा करनी है। हमारा यह तिरंगा हमारी आज़ादी का निशान है, हमारे आज के लोकराज और उसके विकास का निशान है, हमारे भविष्य की समृद्धि और खुशहाली का निशान है। यह झण्डा ऊँचा रहेगा, तो हमारा देश भी ऊँचा रहेगा। हमारा सकल्प है—

केतु तिरगा भू-अम्बर पर सागर पर लहराए,
भारत-भाल हिमालय जग मे कभी न झुकने पाए।

रामू के भाइयो जैसे भारत के जवान आज सिर-धड की बाजी लगाकर इसी सकल्प को पूरा करने मे लगे हैं। लेकिन मेरे अपने घर मे·· ?

[तभी समाधि-मन्दिर के पीछे से नन्ही शोभा आती है—उत्साह और जोश से भरी हुई।]

**शोभा** (निकट आकर) बाबा !

**बूढ़ा** (चौककर) कौन ? ओह, शोभा बिटिया !

**शोभा** बाबा, हमारा जलूस देखा आपने ?

**बूढ़ा** (चकित और हर्षित-सा) अरे, तो क्या तू भी थी उस जलूस मे ?

**शोभा** हाँ, बाबा, वह हमारा पडोसी विजय है न। हम दोनो एक ही स्कूल मे पढ़ते हैं। उसने कहा—"हमारा देश सकट मे है। आओ, हम दोनो मिलकर बस्ती के बच्चो का एक देश-रक्षा-दल बनाएँ।" मैंने कहा—"जरूर बनाएँ।" स्कूल से आते ही हमने एक सभा की, राष्ट्रीय झण्डे को सलामी दी और जलूस निकाला। बाबा, हमने ठीक किया न ?

**बूढ़ा** बिटिया, यह बात सुनकर मैं खुशी से फूला नहीं समा रहा। (समाधि की ओर देखते हुए) आज पता चला कि तेरी स्वर्गीया दादी ने महात्मा गाधी की प्रेरणा से इस घर मे जो आज़ादी की

बूढा	नही बिटिया, तेरे कहने का तेरे पिता पर कोई असर नही होगा। उसे देश से नही, अपने धन से प्रेम है, देश की आजादी से नही, अपने व्यापार से प्यार है। और तेरी माँ? वह घर-गृहस्थी के सुखो मे इतना लीन है कि उसे दुनिया का कुछ पता ही नही। माँ की देखा-देखी ही तेरा भाई प्रकाश बाप की कमाई पर मौज उडाने मे मस्त है। बाकी रहा मैं। बुढापे ने मुझे इतना अपाहिज बना दिया है कि न कुछ कर सकता हूँ, न कह सकता हूँ। और अगर कुछ कहूँ भी, तो इस घर मे मेरी सुनता कौन है? काश, मेरे घर मे रामू के भाइयो-सा एक भी बेटा होता'।

शोभा	यह क्या कह रहे हैं, बाबा? रामू तो हमारे घर का नौकर है।

बूढा	नौकर होकर भी वह हमारे सिर का ताज है। उसके दो भाई पहले से फौज म हैं। अब वह भी फौज मे जाने को बेचैन है।

शोभा	बाबा, यदि आप कहे, तो मैं भी फौज मे भर्ती हो जाती हूँ।

बूढा	धन्य है, बेटी! तेरी इतनी-सी बात सुनकर मेरी छाती गर्व से फूल उठी है। नही, अभी तेरी उम्र फौज मे भर्ती होने की नही, पढने की है।

शोभा	बाबा, मैं पढ तो रही हूँ। हर साल अच्छे नम्बर लेकर पास होती हूँ। लेकिन इसके साथ ही मैं देश की रक्षा मे भी हाथ बँटाना चाहती हूँ।

[तभी सामने की दीवार पर पडोसी लडका विजय दिखाई देता है।]

विजय	(दूर से) शोभा!

शोभा	(पलटकर, देखकर) कौन? विजय! क्या बात है?

विजय	(दूर से) जलूस तो समाप्त हो गया है, लेकिन अभी देश-रक्षा की प्रतिज्ञा बाकी है।

बूढा	कैसी प्रतिज्ञा, विजय? जरा इधर आकर मुझे बता तो।

शोभा	हाँ, विजय, बाबा को आकर सब बता। बाबा को हमारा काम बहुत अच्छा लग रहा है।

[विजय दीवार फाँदकर निकट आ जाता है।]

विजय	(जेब से एक कागज निकालकर) बाबा जी, हमारी प्रतिज्ञा यह है (पढता है)—"हम सब लडके और लडकियाँ आज यह प्रतिज्ञा

## दृश्य दो

[कोठी का वही बगीचा। रात हो चुकी है। दूर शहर के घण्टाघर की घडी रात के ग्यारह बजा रही है। गली मे पहरेदार की आवाज सुनाई देती है। सूने बगीचे मे वैसे तो अँधेरा है, लेकिन गली की बिजली का प्रकाश वृक्षो से छन-छनकर थोडा-थोडा बगीचे मे आ रहा है। थोडी देर बाद कोठी का दरवाजा धीरे-से खुलता है और शोभा जलता हुआ दीया हाथ मे लिये दबे पाँव बाहर आती है। वह इधर-उधर देखती है। फिर वह दीया समाधि मन्दिर मे रखकर घुटना के बल चबूतरे पर बैठ जाती है और समाधि की ओर मुँह करके हाथ जोडती है। कुछ देर बाद वह सिसककर रोने लगती है।]

शोभा (रोते हुए) दादी माँ, मुझ पर नाराज़ मत होना। मैं तो तुम्हारे दिखाए मार्ग पर चलना चाहती हूँ, देश की आज़ादी की रक्षा के लिए जो भी बन पडे, करना चाहती हूँ, परन्तु घरवाले मेरी इस भावना को नही समझ पा रहे। आज शाम को देखा था न कि कैसे माता जी मुझे यहाँ से खीचकर अन्दर ले गई थी? मैंने भी अन्दर जाकर न चाय पी, न रात का खाना खाया। माता जी ने मुझे पीटा, तो मैं अपने कमरे मे जाकर लेट गई। मैं मन-ही मन छटपटा रही थी, खीझ रही थी अपनी कमजोरी पर। मुझे नीद नही आई। दादी माँ, मुझे रह-रहकर तुम्हारा ही खयाल आ रहा था। जब घर के लोग सो गए, तब मैं चुपके से दीया लेकर तुम्हारे चरणो मे आ गई। दादी माँ, देख रही हो न कि सिवाय बाबा जी के हमारे घर मे किसी को देश की चिंता नही। देश पर सकट आया, तो लोगो ने धन दिया, सोना दिया, रक्त दिया, अपने बेटे और भाई दिए, पर हमारे घरवालो ने कुछ नही दिया। हमसे तो हमारा नौकर रामू ही अच्छा है, जिसके दोनो भाई फौज मे भर्ती होकर, अपनी जान हथेली पर रखकर देश की रक्षा कर रहे हैं। मैं भी देश की रक्षा के लिए कुछ करना चाहती हूँ। मैं क्या करूँ? दादी माँ, बताओ न? बताओ न, दादी माँ! मुझे राह दिखाओ न, दादी माँ! माता जी कहती हैं—"लडकियो को ऐसी बात शोभा नही देती।" क्यो

शोभा नही देती ? मैं क्षत्राणी दादी की क्षत्राणी पोती हूँ। मैं भी गोडवाने की रानी दुर्गावती और झांसी की रानी लक्ष्मीबाई की तरह देश की आज़ादी के लिए लड सकती हूँ। लड सकती हूँ न ? दादी माँ, मेरे प्रश्न का उत्तर दो न। नही बोलती ? अच्छा, तो मैं अपने प्रश्न का उत्तर पाकर ही यहाँ से जाऊँगी। मैं सारी रात तुम्हारे चरणो मे इसी तरह भूखी-प्यासी पडी रहूँगी।

[शोभा हाथ जोडे हुए मुँह के बल चबूतरे पर लेट जाती है और बगीचे मे एकदम अँधेरा छा जाता है। थोडी देर बाद स्वप्न सगीत के साथ धीरे-धीरे प्रकाश फैलता है और चार लडकियाँ एन० सी० सी० की वर्दियाँ पहने गाती हुई प्रकट होती हैं।]

लडकियाँ भारत माँ की वीर पुत्रियो की यह अमर कहानी !
सुनो कि कैसे आदिशक्ति फिर प्रकटी बन क्षत्राणी !

बतलाता इतिहास कि अबला नही भारती नारी,
जब-जब सकट आया, चमकी बनकर काल-कटारी,
नारी के साहस की साखी धरती यह बलिदानी !
भारत माँ की वीर पुत्रियो की यह अमर कहानी !

गोडराज की विधवा रानी दुर्गा थी, दुर्गा ही
मातृभूमि की आजादी-हित बनकर वीर सिपाही—
महाबली अकबर की सेना से जूझी दीवानी !
भारत माँ की वीर पुत्रियो की यह अमर कहानी !

महा मुगल सैनिक बल, जिससे बडे-बडे थे हारे,
इधर गोडावाना प्रदेश लघु, क्या तुलना समता रे !
पर दुर्गावती से मुगलो को मात पडी थी खानी !
भारत माँ की वीर पुत्रियो की यह अमर कहानी !

[लडकियाँ गाती गाती अन्धकार मे लोप हो जाती हैं। जब फिर प्रकाश फैलता है, तब दूर युद्ध का कोलाहल सुनाई देता है और सैनिक वेश मे रानी दुर्गावती प्रकट होती है। उसके पीछे-पीछे एक राजपूत सैनिक आता है।]

दुर्गावती : (दांत पीसकर)
समझी सैनिक, समझ गई मैं !
दिन में दुश्मन हार गया था,
आधी रात समय अब उसने
छल से हम पर धावा बाला।
तीन बार वह हमसे हारा।
लगता, उसका जी न भरा है।
फिर चाहे वह मुंह की खाना।
अरे, कहाँ अपना नारायण ?

सैनिक रानी, राजकुँवर है सोए।

दुर्गावती जाओ, उसे जगाकर लाओ,
और बजाओ रण का डंका !

[रणभेरी के साथ अँधेरा हो जाता है। जब फिर प्रकाश फैलता है, तो रानी दुर्गावती के जय-जयकार के साथ 'हर-हर महादेव' का जयघोष सुनाई देता है और रानी दुर्गावती तलवार ताने अपने सैनिकों के बीच दिखाई देती है।]

दुर्गावती (ललकारकर)
गढमण्डल के वीर सैनिको !
आज परीक्षा पुन तुम्हारी !
मातृभूमि की आजादी के—
तुम हो प्रहरी, तुम हो रक्षक।
मातृभूमि पर सकट आया,
यह सकट हम सबका सकट।
शत्रु छीनना चाहे हम से
देश, देश की सुख-स्वतन्त्रता।
पराधीन बनकर जीने से
कही भला है मरना रण मे !
आज मरण-त्योहार मना लो,
बढ़ो, देश की लाज बचा लो !

[फिर अंधकार हो जाता है और उसमे घमासान युद्ध का कोलाहल सुनाई देता है। जब प्रकाश फैलता है, तब रानी दुर्गावती खून से रंगी तलवार लिये रणचण्डी के

रमान लड़ती हुई प्रकट होती है। तभी एक सैनिक भागा-भागा आता है।]

सैनिक रानी माँ ! रानी माँ !

दुर्गावती क्या है ?

सैनिक (रुँधे गले से) लड़ते-लड़ते राजकुँवर, हा !

दुर्गावती समझ गई मैं। वीरोचित ही—
मेरे इकलौते बेटे ने—
प्राप्त वीरगति की है निश्चय !

सैनिक चलकर अन्तिम दर्शन कर लें।

दुर्गावती अन्तिम दर्शन ? समय कहाँ है ?
समरांगण मैं छोड़ न सकती।
अब तो स्वर्ग-लोक मे ही जा
भेंट पुत्र से, पति से होगी !

[तभी एक सनसनाता तीर आकर रानी की आँख मे गड़ जाता है। रानी एक हाथ से अपनी आँख दबा लेती है।]

सैनिक (घबराकर) यह क्या, तीर लगा आँखो मे !

दुर्गावती (निर्भयता से) कोई बात नही, मैं अब भी लड़ सकती हूँ···।

[नेपथ्य मे 'मारो-मारो' का शोर उभरता है।]

सैनिक अरे, सँभलिए !
घेर लिया दुश्मन ने हमको।
पीछे है तूफानी दरिया,
आगे हैं दुश्मन की पाँतें।

[रानी दुर्गावती तुरन्त म्यान से कटार निकाल लेती है।]

दुर्गावती हाथ शत्रु के छू न सकेंगे—
जीते जी मेरी काया को।
इस कटार से मुक्ति मिलेगी।

[अपनी छाती मे कटार घोप लेती है।]

सैनिक (रोकर) रानी माँ, यह क्या कर डाला ?
धन्य-धन्य दुर्गा क्षत्राणी !

[करुण संगीत के साथ चारो ओर अँधेरा छा जाता है।

जब फिर प्रकाश फैलता है, तब चारो लडकियाँ कथा-
गीत गाती हुई प्रकट होती हैं।]

लड़कियाँ भारत माँ की वीर पुत्रियो की यह अमर कहानी!
सुनो कि कैसे आदिशक्ति फिर प्रकटी बन क्षत्राणी!

मातृभूमि पर यो दुर्गा ने अपने प्राण चढाए,
आज़ादी की लौ को बैरी-हाथ नही छू पाए।
सन सत्तावन मे लौ चमकी बन झाँसी की रानी!
भारत माँ की वीर पुत्रियो की यह अमर कहानी!

देश-मुक्ति हित प्रथम युद्ध था, सुप्त शक्तियाँ जागी,
झाँसी की रानी लक्ष्मी ने सुख-शैया निज त्यागी,
कूद पडी समरागण मे बन रानी विकट भवानी।
भारत माँ की वीर पुत्रियो की यह अमर कहानी!

[क्षणिक अधकार के बाद प्रकाश के साथ युद्ध का कोला-
हल और तोपो का शब्द फूटता है। रानी लक्ष्मीबाई
ललकारती हुई प्रकट होती है।]

लक्ष्मीबाई : मैं न कभी निज झाँसी दूँगी!
वीरो, यह है अन्तिम साका,
पराधीन अब देश रहे क्यो?
भाग रहा है आज फिरगी,
टूट रही देखो जजीरें!
एक चोट की और कसर है,
बढे चलो, भारत के वीरो!

मुन्दरा : (आकर) बाई साहब! बाई साहब!

लक्ष्मीबाई : कहो मुन्दरा, समाचार क्या?

मुन्दरा : नई फिरगी सेना आई।
और हमारे सगी-साथी
क्षत-विक्षत हैं, थके हुए हैं।
पास न कोई दुर्ग-ओट है।

लक्ष्मीबाई : कैसी बातें करती हो, सखि!
भारत माँ के वीर बाँकुरे—
कभी न थकते, कभी न रुकते।

गंगादेवी : ऐ विदेशियो, जाओ-जाओ !
भारत अपना देश हमारा,
आजादी अधिकार हमारा।
आजादी की बलि-वेदी पर
कोटि-कोटि हैं प्राण निछावर।
हम गांधी के सच्चे सैनिक,
सत्य अहिंसा शस्त्र हमारा।
ये तोपें-सगीनें हम को—
नही डरा सकती, हम निर्भय।
भारतमाता की जय निश्चय !

[गोली चलने की आवाज। गंगादेवी गोली लगने से गिरती है।]

हाय, लगी यह गोली, लेकिन—
आजादी अब दूर नही है।
भारत माता के चरणो पर
न्योछावर तन ! जय भारत की !

[अंधकार में चारो ओर भारत-माता का जय-जयकार सुनाई देता है। जब फिर प्रकाश फैलता है, तब शोभा चबूतरे पर औंधी लेटी हुई दिखाई देती है। उधर कोठी के अन्दर शोभा के माता-पिता, भाई सब उसे पुकार रहे हैं, जैसे उसे ढूंढ रहे हो। कुछ देर बाद शोभा की माँ कौशल्या टार्च लिये बाहर बगीचे मे आती है और चबूतरे पर लेटी शोभा को देखती है।]

कौशल्या : अरे, शोभा यहाँ बगीचे में लेटी है। (शोभा के पास आकर) शोभा, बेटी शोभा !

[शोभा का पिता मुरलीधर और भाई प्रकाश अन्दर से भागे हुए आते हैं।]

मुरलीधर : अरे, क्या शोभा बगीचे मे लेटी है ? (देखकर खुशी से) हाँ, मिल गई मेरी बेटी। सारा घर छान मारा, पर बगीचे का खयाल ही नही आया।

प्रकाश : आप लोग तो बेकार ही घबरा गए थे।

**मुरलीधर** अरे बेटा, घबराने की तो बात ही थी। शाम को ज़रा-सी बात पर तेरी माँ ने इसे पीट डाला। यह नाराज़ हो गई।

**कौशल्या** बड़ी गुस्सैल है। न चाय पी, न रात को खाना खाया।

**मुरलीधर** आधी रात को मैं पानी पीने उठा, तो इसका बिस्तर खाली पाया।

**प्रकाश** और आपने सारे घर को जगा दिया। बेकार ही नींद खराब की। मैं तो जाकर सोता हूँ। आप मनाइए-दुलराइए अपनी बेटी को यहाँ।

**मुरलीधर** अरे भई, जगाओ न इसे।

**कौशल्या** बहुतेरा हिलाया-डुलाया, यह जागती ही नहीं। (शोभा का माथा छूकर एकाएक घबरा जाती है।) हाय, इसे तो बड़े जोर का बुखार है।

**मुरलीधर** क्या कहा, बुखार है ?

**प्रकाश** (पलटकर) बाहर सर्दी मे लेटी थी, बुखार तो चढ़ना ही था।

**मुरलीधर** हटो, मैं इसे उठाकर अन्दर ले चलता हूँ।

[मुरलीधर जब शोभा को उठाने लगता है, तब वह तड़पकर, अपने आपको छुड़ाकर दूर जा खड़ी होती है। उसकी आँखो से जैसे अगारे बरस रहे हैं।]

**शोभा** खबरदार, जो मुझे किसी ने हाथ लगाया। आप सब स्वार्थी हैं, पापी हैं, देशद्रोही हैं।

**मुरलीधर** अरे बेटी, यह क्या कह रही है ?

**शोभा** मैं ठीक कह रही हूँ। आज देश सकट मे है। देश की आजादी खतरे मे है। देश की रक्षा के लिए लोगो ने धन दिया, सोना दिया, रक्त दिया, बेटे दिये। आपने क्या दिया ? कुछ नही। स्वतन्त्रता-सग्राम की सेनानी मातेश्वरी गगादेवी के घर की यह दशा !

[तभी रामू का सहारा लिये बूढ़ा भी आ जाता है।]

**मुरलीधर** अरे पिता जी, आप ?

**बूढ़ा** बेटा, इस घर मे आज बहुत दिनो बाद देश प्रेम की यह ललकार सुनाई दी है। इस ललकार ने मुझे भी जगा दिया।

**कौशल्या** (घबराई-सी) पिता जी, पता नहीं क्या हो गया है मेरी शोभा को। आप इसे पुचकारकर भीतर ले चलिए न ! इसे बुखार है।

शोभा हाँ, मुझे बुखार है देश प्रेम का। जैसे दादी माँ ने रानी दुर्गावती और लक्ष्मीबाई की तरह देश के लिए अपने प्राण दिये थे, आज मै भी अपने प्राण दे दूंगी। देश के रक्षा कोष मे यही होगी इस घर की भेट, *यही होगी इस घर की भेंट, यही होगी* ।

[कहती-कहती अचेत होकर समाधि-मन्दिर के सामने गिर पडती है। सब लोग लपककर उसे उठाते है।]

कौशल्या (रोते हुए) हाय, मेरी बेटी फिर बेहोश हो गई।

प्रकाश पिता जी, आप इसे अन्दर ले चलिए। मै डॉक्टर को बुलाता हूँ।

बूढ़ा नही, डॉक्टर को बुलाने की जरूरत नही। (शोभा को अपनी गोद मे ले लेता है।) मेरी शोभा दुर्गावती और लक्ष्मीबाई की अवतार है, अपनी दादी के स्वतन्त्रता-मन्दिर की जोत है। यह जोत कभी बुझ नही सकती।

मुरलीधर (रोते हुए) इस जोत के प्रकाश ने आज मेरी आँखें खोल दी। मैं सुबह होते ही बीस हजार रुपये रक्षा-कोष में दूंगा।

कौशल्या मैं अपने गहने रक्षा-कोष मे दूंगी।

प्रकाश मैं देश की रक्षा के लिए फौज म भर्ती होऊँगा।

शोभा (होश मे आकर) भैया!

सब (खुश होकर) शोभा होश मे आ गई।

शोभा भैया, तुम फौज मे भर्ती होगे? ओह! मैं कितनी खुश हूँ आज। तुम जिस दिन अपने देश की रक्षा के लिए मोर्चे पर जाओगे, तो मैं तुम्हारे हाथो मे राखी बाँधूंगी, माथे पर तिलक लगाकर तुम्हारी आरती उतारूँगी। मैं नर्स बनकर तुम्हारे पीछे पीछे आऊँगी। जरूरत पडने पर भारत माता के शत्रुओ का अपने हाथो से सहार करूँगी और अपने रक्त की अन्तिम बूंद देकर भारत-माता के स्वतन्त्रता मन्दिर की रक्षा करूँगी। आओ, हम भारत-माता की वन्दना गाएँ।

[सब मिलकर राष्ट्र-गान 'वन्दे मातरम्' गाते हैं।]

सब : वन्दे मातरम्!
सुजलाम् सुफलाम् मलयजशीतलाम्
शस्य-श्यामलाम् मातरम्!
वन्दे मातरम्!

शुभ्र ज्योत्स्ना पुलकित यामिनीम्,
फुल्ल-कुसुमित-द्रुमदल-शोभिनीम्,
सुहासिनीम् सुमधुर भाषिणीम्,
सुखदाम् वरदाम् मातरम्।
वन्दे मातरम्।

[चारों ओर दिव्य प्रकाश फैल जाता है। समाधि-मन्दिर के ऊपर पहले भारत का मानचित्र और फिर रानी दुर्गावती, रानी लक्ष्मीबाई, गंगादेवी और महात्मा गांधी की दिव्याकृतियाँ आशीर्वाद की मुद्रा में दिखाई देती हैं।]

[पर्दा गिरता है]

# भोर का तारा



जगदीशचन्द्र माथुर

---

**पात्र-परिचय**

माधव : गुप्त साम्राज्य का कर्मचारी शेखर का मित्र
शेखर : उज्जयिनी का कवि
छाया : शेखर की प्रेयसी, अनन्तर पत्नी

स्थान : गुप्त साम्राज्य की राजधानी उज्जयिनी का एक गृह
समय : पाँचवी शती, सन् ४५५ के आसपास

---

## दृश्य : एक

[कवि शेखर का गृह। सब वस्तुएँ अस्तव्यस्त। बायी ओर एक तख्त पर मैली फटी हुई चादर बिछी है। उस पर एक चौकी भी रखी है और लेखनी इत्यादि भी। इधर-उधर भोजपत्र (या कागज) बिखरे हुए पड़े हैं। एक तिपाई भी रखी है जिस पर कुछ पात्र रखे हैं।

*पीछे की ओर एक खिडकी है। बायाँ दरवाजा अन्दर जाने के लिए है और दायाँ बाहर से आने के लिए। दीवारों में कई आले या ताक हैं, जिनमे दीपदान या कुछ और वस्तुएँ रखी हैं।*

शेखर कुछ गुनगुनाते हुए टहलता है या कभी-कभी तख्त पर बैठकर कुछ लिखता जाता है। जान पड़ता है वह कविता

बनाने म संलग्न है। तल्लीन मुद्रा। जो कुछ वह कहता है उसे लिखता भी जाता है।]

शेखर अँगुलियाँ आतुर तुरत पसार
खींचते नीले पट का छोर ।'
(दुबारा कहता है, फिर लिखता है।)
टँका जिसम जाने किस ओर
स्वर्ण कण स्वर्ण कण'

[पूरा करने के प्रयास म तल्लीन है, इतने म बाहर से माधव का प्रवेश। सासारिकता का भाव और जानकारी उसके चेहरे पर प्रकट है। द्वार के पास खडा होकर थोडी देर तक वह कवि की लीला देखता रहता है। उसके बाद]

माधव शेखर!

शखर (अभी सुना ही नहीं। एक पक्ति लिखकर)
स्वण कण प्रिय को रहा निहार।

माधव शे खर!

शखर (चौंककर) कौन? ओह माधव! (उठकर माधव की ओर बढता है।)

माधव क्या कर रहे हो शेखर?

शखर यहाँ आओ माधव यहा। (उसके कन्धो को पकडकर तख्त पर बिठाता हुआ) यहाँ बैठो। (स्वय खडा है) माधव, तुमने भोर का तारा देखा है कभी?

माधव (मुस्कराते हुए) हाँ? क्या?

शेखर (बडी गम्भीरतापूर्वक) कैसा अकेला-सा एकटक देखता रहता है? जानते हो क्यो? नही जानते? (तख्त के दूसरे भाग पर बैठता हुआ) बात यह है कि एक बार रजनीबाला अपने प्रियतम प्रभात स मिलने चली, गहरे नीले कपड पहनकर, जिसम सोने के तारे टँके थे। ज्यो ही निकट पहुँची त्यो ही लाज की आँधी आयी और बेचारी रजनी को उठा ले चली (रुककर) फिर क्या हुआ।

माधव (कुछ उद्योग के बाद) प्रभात अकेला रह गया?

शखर नहीं, उसने अपनी अँगुलियाँ पसार कर उसके नीले पट का छोर खीच लिया!—जानते हो, यह भोर का तारा है न, उसी छोर म टँका हुआ सोने का कण है एकटक प्रियतम प्रभात को निहार रहा है। क्यो?

माधव बहुत ऊँची कल्पना है! लिख चुके क्या?

शेखर अभी तो और लिखूंगा ! बैठा ही था कि इतने मे तुम आ गए ··

माधव : (हँसते हुए) और तब तुम्हे ध्यान हुआ कि तुम धरती पर ही बैठे थे, आकाश मे नही। (रुककर) मुझे कोस तो नही रहे हो शेखर ?

शेखर (भोलेपन से) क्यो ?

माधव तुम्हारी परियो और तारो की दुनिया मे मैं मनुष्य की दुनिया लेकर आ गया।

शेखर : (सच्चेपन से) कभी-कभी तो मुझे तुममे भी कविता दीख पडती है।

माधव मुझमे ?—(ज़ोर से हँसकर) तुम अठखेलियाँ करना भी जानते हो ? (गम्भीर होते हुए) शेखर, कविता तो कोमल हृदय की चीज है : मुझ जैसे कामकाजी राजनीतिज्ञो और सैनिको के तो छूने भर से मुरझा जाएगी। हम लोगो के लिए तो दुनिया की और ही उलझनें बहुत है।

शेखर माधव, तुमने कभी यह भी सोचा है कि इन उलझनो से बाहर निकलने का मार्ग भी हो सकता है ?

माधव और हम लोग करते ही क्या हैं ? रात-दिन मनुष्यो की नयी-नयी उलझनें सुलझाने का ही तो उद्योग करते रहते हैं।

शेखर यही तो नही करते। तुम राजनीतिज्ञ और मन्त्री लोग बडी सजीदगी के साथ अमीरी-गरीबी, युद्ध और सन्धि की समस्याओ को हल करने का अभिनय करते हो परन्तु मनुष्य को इन उलझनो के बाहर कभी नही लाते। कवि इसका प्रयत्न करते हैं पर उन्हे पागल ·

माधव कवि (अवहेलनापूर्वक) तुम उलझनो से बाहर निकलने का प्रयास नही करते, तुम उन्हे भूलने का प्रयास करते हो। तुम सपना देखते हो कि जीवन सौन्दर्य है, हम जागते रहते हैं और देखते रहते हैं कि जीवन कर्त्तव्य है।

शेखर (भावुकता से) मुझे तो सौन्दर्य ही कर्त्तव्य जान पडता है। मुझे तो जहाँ सौन्दर्य दीख पडता है, वहाँ कविता दीख पडती है, वही जीवन दीख पडता है। (स्वर बदलकर) माधव, तुमने सम्राट् के भवन के पास राजपथ के किनारे उस अन्धी भिखमगी को कभी देखा है ?

माधव (मुस्कराहट रोकते हुए) हाँ !

शेखर : मैं उसे सदा भीख देता हूँ। जानते हो क्यो ?

माधव क्यो ! (कुछ सोचने के बाद) 'दया सज्जनस्य भूषणम्।'

शेखर क्या ? हूँ (ठहरकर) मैं तो उसे इसलिए भीख देता हूँ क्योकि मुझे उसमे एक कविता, एक लय, एक व्यथा झलक पडती है। उसका गहरा झुर्रीदार चेहरा, उसके काँपते हुए हाथ, उसकी आँखो के बेबस गड्ढे (एक तरफ एकटक देखते हुए, मानो इस मानसिक चित्र मे खो गया हो)

उसकी झुकी हुई कमर—माधव, मुझे तो ऐसा जान पड़ता है मानो किसी शिल्पी ने उसे इस साँचे में ढाला हो।

माधव (इस भाषण से उसका अच्छा-खासा मनोरंजन हो गया जान पड़ता है। खड़े होकर शेखर पर शरारत-भरी आँखें गड़ाते हुए) शेखर, टाट में रेशम का पैबन्द क्यों लगाते हो। ऐसी कविता तो तुम्हें किसी देवी की प्रशंसा में करनी थी।

शेखर (सरल भाव से) किस देवी की?

माधव · (अर्थपूर्ण स्वर में) यह तो उसके पुजारी से पूछो।

शेखर मैं तो नहीं जानता, किसी पुजारी को?

माधव अपने को आज तक किसी ने जाना है, शेखर? (हँस पड़ता है। कुछ समझकर झेंपता-सा है) पागल।· (गम्भीर होकर बैठते हुए) शेखर, सच बताओ तुम छाया को प्यार करते हो?

शेखर (मन्द गहरे स्वर में) कितनी बार पूछोगे?

माधव बहुत प्यार करते हो?

शेखर माधव, जीवन में मेरी दो ही तो साधनाएँ हैं, (तख्त से उठकर खिड़की की ओर बढ़ता हुआ) छाया का प्यार और कविता।

[खिड़की के सहारे दर्शकों की ओर मुँह करके खड़ा हो जाता है।]

माधव और छाया?

शेखर (वही गहरा स्वर) हम दोनों नदी के दो किनारे हैं, जो एक-दूसरे की ओर मुड़ते हैं पर मिल नहीं पाते।

माधव (उठकर शेखर के कन्धे पर हाथ रखते हुए) सुनो शेखर, नदी सूख भी तो सकती है।

शेखर नहीं माधव, उसके भाई देवदत्त से किसी तरह की आशा करना व्यर्थ है। मेरे लिए तो उसका हृदय सूखा हुआ है।

माधव क्यों?

शेखर तुम पूछते हो क्यों? तुम भी सम्राट् स्कन्दगुप्त के दरबारी हो। देवदत्त एक मन्त्री है। भला एक मन्त्री की बहन का एक मामूली कवि से क्या सम्बन्ध?

माधव मामूली कवि! शेखर, तुम अपने को मामूली कवि समझते हो?

शेखर और क्या समझूँ?—राजकवि?

माधव सुनो शेखर, तुम्हें एक खबर सुनाता हूँ।

शेखर खबर?

माधव  हाँ ! कल रात को राजभवन गया था ।

शेखर  इसमे तो कोई नयी बात नही । तुम्हारा तो काम ही यह है ।

माधव  नही कल एक उत्सव था । स्वय सम्राट् ने कुछ लोगो को बुलाया था । गाने हुए, नाच हुए, दावत हुई। एक युवती ने बहुत सुन्दर गीत सुनाया । सम्राट् उस गीत पर बहुत रीझ गये ।

शेखर  (उकताकर) आखिर तुम यह सब मुझे क्यो सुना रहे हो माधव ?

माधव  इसलिए कि सम्राट् ने उस गीत बनानेवाले का नाम पूछा । पता चला कि उसका नाम था—शेखर ।

शेखर  (चौंककर) क्या ?

माधव  अभी और तो सुनो । उस युवती ने सम्राट् से कहा कि अगर आपको यह गाना पसन्द है तो इसके लिखनेवाले कवि को अपने दरबार मे बुलाइए । अब कल से यह कवि महाराजाधिराज सम्राट् स्कन्दगुप्त विक्रमादित्य के दरबार मे जायेगा ।

शेखर  मैं ?

माधव  (अभिनय करते हुए, झुककर) श्रीमान्, क्या आप ही का नाम शेखर है ?

शेखर  मैं जाऊँगा सम्राट् के दरबार मे ? माधव, सपना तो नही देख रहे हो ?

माधव : सपने तो तुम देखा करते हो ।·· लेकिन अभी समाचार पूरा कहाँ हुआ है ?

शेखर  हाँ, यह युवती कौन है ?

माधव  अब यह भी बताना होगा ? तुम भी बुद्धू हो । क्या इसी बूते पर प्रेम करने चले थे ?

शेखर  ओह ! छाया ! (माधव का हाथ पकडते हुए)·· तुम कितने अच्छे हो !

माधव  और सुनो । · सम्राट् ने देवदत्त को आज्ञा दी है कि वह तक्षशिला जाकर वहा के क्षत्रप वीरभद्र के विद्रोह को दबायें । आर्य देवदत्त के साथ मैं भी जाऊँगा, उनका मन्त्री बनकर । समझे ?

शेखर  (स्वप्न से मे) तो क्या सच ही छाया ने कहा । सच ही ?

माधव  शेखर, आठ दिन बाद आर्य देवदत्त और मैं तक्षशिला चल देंगे ।··· इसके बाद—उसके बाद छाया कहाँ रहेगी ? भला बताओ तो ?

शेखर . माधव ! ··(माधव हँस पडता है) इतना भाग्य ? इतना ? विश्वास नही होता ?

माधव  न करो विश्वास । लेकिन भलेमानस, छाया क्या इस कूडे मे रहेगी ? ये बिखरे हुए कागज, टूटी चटाई, फटे हुए वस्त्र । शेखर, लापरवाही की

सीमा होती है।

शेखर मैं कोई इन बातो की परवाह करता हूँ।

माधव और फिर?

शेखर · मैं परवाह करता हूँ फूल की पखुड़ियों पर जगमगाती हुई ओस की, (भावोद्रेक से) सन्ध्या मे सूर्य की किरणो को अपनी गोदी मे सिमेटने वाले बादल के टुकडो की, सुबह का आकाश के कोने पर टिमटिमाने वाले तारे की··

माधव एक चीज रह गई।

शेखर क्या ?

माधव जिसे तुम दिन मे वृक्षो के नीचे फैली देखते हो। (उठकर खड़ा हो जाता है।)

शेखर वृक्षो के नीचे ?

माधव जिसे दर्पण मे झलकती देखते हो।

शेखर दर्पण मे ?

माधव जिसे तुम अपने हृदय मे हमेशा देखते हो। (निकट आ गया है)

शेखर (समझकर बच्चो की तरह) छाया।

माधव (मुस्कराते हुए) छाया ?

[पर्दा गिरता है]

## दृश्य दो

[उज्जयिनी मे आर्य देवदत्त का भवन जिसमे अब शेखर और छाया रहते हैं। कमरा सजा हुआ साफ है। दीवारो पर कुछ चित्र खिंचे हुए हैं। कोने मे धूपदान है। सामने तख्त पर चटाई और लिखने पढने का सामान है। बराबर म एक छोटी चौकी पर कुछ ग्रन्थ रखे हुए है। दूसरी ओर एक पीढा है जिसके निकट मिट्टी की, किन्तु कलापूर्ण एक अगीठी रखी हुई है। दीवार के एक भाग पर अलगनी है जिस पर कुछ धोतियाँ इत्यादि टँगी हैं।

छाया—सौन्दर्य की प्रतिमा, चाचल्य, उन्माद और गाम्भीर्य का जिसमे स्त्री सुलभ सम्मिश्रण है—गृहस्वामिनी होने के नाते कमरे की सब वस्तुएँ स्थान पर सँभालकर रख रही है। साथ ही कुछ गुनगुनाती भी जाती है। जाडा होने के कारण

तापने के लिए उसने अँगीठी मे अग्नि प्रज्वलित कर दी है। कुछ देर बाद पीढे पर बैठकर वह अँगीठी को ठीक करती है। उसकी पीठ द्वार की ओर है। अपने कार्य और गान मे इतनी सलग्न है कि उसे बाहर पैरो की आवाज नही सुनाई देती है।]

प्यार की है क्या यह पहचान ?
चाँदनी का पाकर नव स्पर्श चमक उठते पत्ते नादान,
पवन को परस सलिल की लहर, नृत्य मे हो जाती लयमान,
सूर्य का सुनकोमल पद-चाप, फूट उठता चिडियो का गान,
तुम्हारी तो प्रिय केवल याद, जगाती मेरे सोये प्राण।
प्यार की है क्या यह पहचान ?

(धीरे से शेखर का प्रवेश) कन्धे और कमर पर ऊनी दुशाला है, बगल मे ग्रन्थ। गले मे फूलो की माला है। द्वार पर चुपचाप खडा होकर मुस्कराते हुए छाया का गीत सुनता है।

शेखर : (थोडी देर बाद, धीरे से) छाया ! (छाया नही सुन पाती है ! गाना जारी है। फिर कुछ समय बाद) छाया !

छाया (चौककर खडी हो जाती है। एक साथ मुख फेरकर) ओह !

शेखर . (तख्त की ओर बढता हुआ) छाया, तुम्हे एक कहानी मालूम है ?

छाया : (उत्सुकतापूर्वक) कौन-सी ?

शेखर · (छोटी चौकी पर पहले तो अपनी बगलवाला ग्रन्थ रखता है, और फिर उस पर दुशाला रखते हुए) एक बहुत सुन्दर-सी।

छाया : सुनें, कैसी कहानी है !

शेखर (बैठकर) एक राजा के यहाँ एक कवि रहता था, युवक और भावुक। राजभवन मे सब लोग उसे प्यार करते थे, राजा तो उस पर निछावर था। रोज सुबह राजा उसके मुँह से नई कविता सुनता, नई और सुन्दर कविता।

छाया · (पीढे पर बैठ जाती है, चिबुक को हथेली पर टेकती है।)

शेखर : परन्तु उसमे एक बुराई थी।

छाया : क्या ?

शेखर : वह अपनी कविता केवल सुबह के समय सुनाता था। यदि राजा उससे पूछता है कि तुम दोपहर या सन्ध्या को अपनी कविता क्यो नहीं सुनाते तो वह उत्तर देता, मैं केवल रात के तीसरे पहर मे कविता लिख सकता हूँ।

छाया : राजा उससे रुष्ट नही हुआ ?

चाँदनी बीत जाती है, जब कविता भी नीरव हो जाती है, तब पुरुष को चट्टानें फिर बुलाती हैं और वह ऐसे भागता है मानो पिंजरे से छूटा हुआ पंछी। और स्त्री के लिए फिर वही अँधेरा, फिर वही सूनापन!

शेखर (मन्द स्वर मे) छाया, तुम मेरे साथ अन्याय कर रही हो।

छाया क्या एक दिन तुम मुझे भी ऐसे छोडकर न चले जाओगे?

शेखर लेकिन छाया, तुम्हे छोडकर कहाँ जा सकता हूँ?

छाया ऊँहूँ, मैं नही मान सकती।

शेखर सुनो तो, मेरे लिए जीवन मे ऐसी सूखी चट्टानें थोडे ही हैं। मेरी कविता ही मेरी हरी-भरी वाटिका है। मैं उसे प्यार करता हूँ क्योकि मुझे तुम्हारे हृदय मे सौन्दर्य दीखता है जिस रोज मैं तुमसे दूर हो जाऊँगा, उस रोज मैं सौन्दर्य से दूर हो जाऊँगा, (कुछ रुककर) मेरी कविता मर जाएगी।

छाया नही शेखर, मैं मर जाऊँगी, किन्तु तुम्हारी कविता रहेगी, बहुत दिन रहेगी।

शेखर मेरी कविता! (कुछ दर बाद) छाया, आज मैं तुम्हे एक बडी विशेष बात बतानेवाला हूँ, एक भेद जो अब तक मैंने तुमसे छिपा रखा था।

छाया रहने दो, तुम सदा ऐसे भेद और ऐसी कहानियाँ सुनाया करते हो।

शेखर नही। अच्छा, तनिक उस दुशाले को उठाओ (छाया उठती है।) उसके नीचे कुछ है। (छाया उस ग्रथ को अपने हाथ म लेती है।) उसे खोलो • क्या है?

छाया (आश्चर्यान्वित होकर) ओह, (ज्यो ज्यो छाया उसके पन्ने उलटती जाती है, शेखर की प्रसन्नता बढती जाती है।) 'भोर का तारा'! उफ्फोह! यह तुमने कब लिखा? मुझसे छिपाकर?

शेखर (हँसते हुए। विजय का-सा भाव) छाया, तुम्हे याद है वह दिन जब माधव के साथ मैं तुम्हारे भाई देवदत्त से मिलने इसी भवन मे आया था?

छाया (शेखर की ओर थोडी देर देखकर) उस दिन को कैसे भूल सकती हूँ, शेखर? उसी दिन तो भैया को तक्षशिला जाने की आज्ञा मिली थी, उसी दिन तो उन्होंने तुम्हे और मुझे माता जी का वह पत्र दिखाया था जिसने हम दोनो को सर्वदा के लिए बाँध दिया।

शेखर हाँ छाया, उसी दिन, उसी दिन मैंने इस महाकाव्य को लिखना आरम्भ किया था (गहरे स्वर म) आज वह समाप्त हो गया।

छाया शेखर, यह हमारे प्रेम की अमर स्मृति है!

शेखर उसे यहाँ लाओ। (हाथ मे लेकर चाव से खोलता हुआ) 'भोर का तारा'

शेखर नही। उसने सोचा, कवि के घर पर चलकर देखा जाय कि इसम रहस्य क्या है। रात को तीसरा पहर होते ही राजा वेश बदलकर कवि के घर के पास खिडकी के नीचे बैठ गया।

छाया उसके बाद ?

शेखर उसके बाद राजा ने देखा कि कवि लेखनी लेकर तैयार बैठ गया। थोडी देर म कही से बहुत मधुर, बहुत सुरीला स्वर राजा के कान मे पडा। राजा झूमने लगा और कवि की लेखनी आपने-आप चलने लगी।

छाया फिर ?

शेखर फिर क्या ! राजा महल को लौट आया और उसके बाद उसने कवि से कभी यह प्रश्न नही पूछा कि वह सुबह ही क्यो कविता सुनाता था। भला बताओ क्या नही पूछा ?

छाया बताऊँ ?

शेखर हाँ।

छाया राजा को यह मालूम हो गया कि उस गायिका के स्वर मे ही कवि की कविता थी। और बताऊँ ? (खडी हो जाती है)

शेखर (मुस्कराते हुए) छाया, तुम ·

छाया (टोककर शीघ्रता और चचलता के साथ) वह गायिका और कोई नही उस कवि की पत्नी थी। और बताऊँ ? उस कवि को कहानी सुनान का बडा शौक था, झूठी कहानी। और बताऊँ ? उस कवि के बाल लम्बे थे, कपडे ढीले-ढाले, गले मे उसके फूलो की माला थी, माथे पर (इस बीच मे शेखर की मुस्कराहट हल्की हँसी मे परिणित हो गई है, यहाँ तक कि इन शब्दो तक पहुँचते-पहुँचते दोना जोर से हँस पडते हैं।)

शेखर (थोडी देर बाद गम्भीर होते हुए) लेकिन छाया, तुम्ही बताओ तुम्हारे गान, तुम्हारी प्रेरणा, तुम्हारे प्रेम के बिना मेरी कविता क्या होती है ? तुम मेरी कविता हो।

छाया (बडे गम्भीर, उलाहना भरे स्वर मे) प्रत्येक पुरुष के लिए स्त्री एक कविता है।

शेखर क्या मतलब तुम्हारा ?

छाया कविता तुम्हारे सूने दिलो मे सगीत भरती है, स्त्री भी तुम्हारे ऊबे हुए मन को बहलाती है। पुरुष जब जीवन की सूखी चट्टानो पर चढता चढता थक जाता है, तब सोचता है, 'चलो थोडा मनबहलाव ही कर लें।' स्त्री पर अपना सारा प्यार, अपने सारे अरमान निछावर कर देता है, मानो दुनिया मे और कुछ हो ही न। और उसके बाद जब

चाँदनी बीत जाती है, जब कविता भी नीरव हो जाती है, तब पुरुष को चट्टानें फिर बुलाती हैं और वह ऐसे भागता है मानो पिंजरे से छूटा हुआ पछी। और स्त्री के लिए फिर वही अँधेरा, फिर वही सूनापन !

शेखर : (मन्द स्वर मे) छाया, तुम मेरे साथ अन्याय कर रही हो।

छाया : क्या एक दिन तुम मुझे भी ऐसे छोडकर न चले जाओगे ?

शेखर लेकिन छाया, तुम्हे छोडकर कहाँ जा सकता हूँ ?

छाया ऊँहूँ, मैं नही मान सकती।

शेखर . सुनो तो, मेरे लिए जीवन मे ऐसी सूखी चट्टानें थोडे ही है। मेरी कविता ही मेरी हरी-भरी वाटिका है। मैं उसे प्यार करता हूँ क्योंकि मुझे तुम्हारे हृदय मे सौन्दर्य दीखता है जिस रोज़ मैं तुमसे दूर हो जाऊँगा, उस रोज़ मैं सौन्दर्य से दूर हो जाऊँगा, (कुछ रुककर) मेरी कविता मर जाएगी।

छाया नही शेखर, मैं मर जाऊँगी, किन्तु तुम्हारी कविता रहेगी, बहुत दिन रहेगी।

शेखर मेरी कविता ! (कुछ देर बाद) छाया, आज मैं तुम्हे एक बडी विशेष बात बतानेवाला हूँ, एक भेद जो अब तक मैंने तुमसे छिपा रखा था।

छाया : रहने दो, तुम सदा ऐसे भेद और ऐसी कहानियाँ सुनाया करते हो।

शेखर नही। अच्छा, तनिक उस दुशाले को उठाओ (छाया उठती है।) उसके नीचे कुछ है। (छाया उस ग्रंथ को अपने हाथ में लेती है।) उसे खोलो ···क्या है ?

छाया (आश्चर्यान्वित होकर) ओह, (ज्यो-ज्यों छाया उसके पन्ने उलटती जाती है, शेखर की प्रसन्नता बढती जाती है।) 'भोर का तारा' ! उफ्फोह ! यह तुमने कब लिखा ? मुझसे छिपाकर ?

शेखर : (हँसते हुए। विजय का-सा भाव) छाया, तुम्हे याद है वह दिन जब माधव के साथ मै तुम्हारे भाई देवदत्त से मिलने इसी भवन मे आया था ?

छाया : (शेखर की ओर थोडी देर देखकर) उस दिन को कैसे भूल सकती हूँ, शेखर ? उसी दिन तो भैया को तक्षशिला जाने की आज्ञा मिली थी, उसी दिन तो उन्होंने तुम्हे और मुझे माता जी का वह पत्र दिखाया था जिसने हम दोनों को सर्वदा के लिए बाँध दिया।

शेखर : हाँ छाया, उसी दिन, उसी दिन मैंने इस महाकाव्य को लिखना आरम्भ किया था (गहरे स्वर मे) आज वह समाप्त हो गया।

छाया : शेखर, यह हमारे प्रेम की अमर स्मृति है !

शेखर . उसे यहाँ लाओ। (हाथ मे लेकर चाव से खोलता हुआ) 'भोर का तारा'

छाया, यह काव्य बड़ी लगन का फल है। कल मैं इसे सम्राट् की सेवा में ले जाऊँगा। और फिर जब मैं उस सभा में इसे सुनाना आरम्भ करूँगा, तब, तब, सारी उज्जयिनी की आँखें मेरे ऊपर होंगी। महाकाव्य, महाकाव्य! उस समय सम्राट् गद्गद हो जाएँगे और मैं कवियों का सिरमौर हो जाऊँगा। छाया, बरसों बाद दुनिया पढ़ेगी कवि कुल-शिरोमणि शेखर-कृत 'भोर का तारा' हा, हा, हा···(विभोर छाया उसकी ओर एकटक देख रही है। सहसा उसके चेहरे पर चिन्ता की रेखा खिंच जाती है। शेखर हँस रहा है।)

छाया शेखर! (वह हँसे जा रहा है) शेखर! (शेखर की दृष्टि उस पर पड़ती है।)

शेखर (सहसा चुप होकर) क्यों छाया, क्या हुआ तुमको?

छाया (चिन्तित स्वर में) शेखर! (चुप हो जाती है।)

शेखर कहो।

छाया शेखर, तुम इसे सँभालकर रखोगे न?

शेखर . बस इतनी ही-सी बात?

छाया मुझे डर लगता है कि···कि···कहीं यह नष्ट न हो जाए, कोई इसे चुरा न ले जाए और फिर तुम···

शेखर : हा, हा, हा·· पगली! ऐसा क्यों होने लगा? सोचने से ही डर गईं। छाया, छाया, तुम्हारे लिए तो आज प्रसन्न होने का दिन है, बहुत प्रसन्न। इधर देखो छाया, हम लोग कितने सुखी हैं। और तुम हो तक्षशिला के क्षत्रप देवदत्त की बहन और उज्जयिनी के सबसे बड़े कवि शेखर की पत्नी! तक्षशिला का क्षत्रप और उज्जयिनी का कवि। हूँ, हूँ, हूँ! क्यों छाया?

छाया : (मन्द स्वर में) तुम सच कहते हो, शेखर, हम लोग बहुत सुखी हैं।

शेखर (मग्नावस्था में) बहुत सुखी।

[सहसा बाहर कोलाहल। घोड़े की टापों की आवाज। शेखर और छाया छिटक कर चैतन्य खड़े हो जाते हैं। शेखर द्वार की ओर बढ़ता है।]

· कौन है?

[सहसा माधव का प्रवेश। थकित और श्रमित शस्त्रों से सुसज्जित पसीने से नहा रहा है। चेहरे पर भय और चिन्ता के चिह्न हैं।]

शेखर और
छाया  माधव !

शेखर  माधव तुम यहाँ कहाँ ?

माधव  (दोनो पर दृष्टि फेंकता हुआ) शेखर, छाया, (फिर उस कमरे पर डरती-सी आँखें डालता है, मानो उस सुरम्य घोसले को नष्ट करने से भय खाता हो। कुछ देर बडे प्रयत्न और कष्ट के साथ बोलता है।) मैं तुम दोनो से भीख माँगने आया हूँ।

[छाया और शेखर के आश्चर्य का ठिकाना नही है।]

छाया  भीख माँगने, तक्षशिला से ?

शेखर  तक्षशिला से ! माधव, क्या बात है ?

माधव  (धीरे-धीरे, मजबूती के साथ बोलना प्रारम्भ करता है, परन्तु ज्यो-ज्यो बढता है, त्यो-त्यो स्वर मे भावुकता आती है।) हाँ, मैं तक्षशिला से ही आ रहा हूँ। यहाँ तक कैसे आ गया, यह मैं नही जानता। हाँ, यह जानता हूँ कि आज गुप्त साम्राज्य सकट मे है और हमे घर-घर भीख माँगनी पडेगी।

शेखर  गुप्त साम्राज्य सकट मे है ! क्या कह रहे हो माधव ?

माधव  (सजीदगी से साथ) शेखर, पश्चिमोत्तर सीमा पर आग लग चुकी है। हूणो का सरदार तोरमाण भारतवर्ष पर चढ आया है।

छाया  (भयाक्रान्त होकर) तोरमाण !

माधव  उसने सिन्धु नदी को पार कर लिया है उसने अम्भी राज्य को नष्ट कर दिया है। उसकी सेना तक्षशिला को पैरो तले रौंद रही है···

छाया  (सहसा माधव के निकट जाकर भय से कातर हो उसकी भुजा पकडती हुई) तक्षशिला ?

माधव  (उसी स्वर मे) सारा पचनद आज उसके भय से काँप रहा है ! एक के बाद एक गाँव जल रहे हैं, हत्याएँ हो रही हैं, अत्याचार हो रहा है ! शीघ्र ही सारा आर्यावर्त पीडितो की हाहाकार से गूँजने लगेगा। शेखर, छाया—मैं तुमसे भीख माँगता हूँ—नई भीख माँगता हूँ—सम्राट् स्कन्दगुप्त की, देश की, इस सकट मे मदद करो।

[बाहर भारी कोलाहल ! शेखर और छाया जडवत् खडे हैं।]

: बाहर देखो जनता उमड रही है। शेखर, तुम्हारी वाणी मे ओज है। तुम्हारे स्वर मे प्रभाव है। तुम अपने शब्दो के बल पर सोई हुई आत्माओ को जगा सकते हो, युवको मे जान फूँक सकते हो। (शेखर

सुने जा रहा है। चेहरे पर भावो का आवेग। मस्तक पर हाथ रखता है।) आज साम्राज्य को सैनिको की आवश्यकता है। शेखर, ओजमयी कविता द्वारा तुम गाँव-गाँव म जाकर यह आग फैला दो जिससे हजारो और लाखो भुजाएँ अपने सम्राट् और देश की रक्षा के लिए शस्त्र हाथ म ले ल (कुछ रुककर शेखर के चेहरे की ओर देखता है। उसकी मुद्रा बदल रही है, जैसे कोई भीषण उद्योग कर रहा हो।) कवि, देश तुमसे बलिदान माँगता है।

छाया (अत्यन्त दर्द भरे स्वर मे) माधव, माधव।

माधव (मुडकर छाया की ओर कुछ देर देखता है, फिर थोडी देर बाद) छाया, उन्होने कहा था, 'मेरे प्राण क्या चीज हैं, इसमे तो सहस्रो मिट गए और सहस्रो को मिटना है।'

शेखर (मानो नीद से जागा हो।) किसने ?

माधव आर्य देवदत्त ने, अन्तिम समय।

छाया (जैसे बिजली गिरी हो।) माधव, माधव, तो क्या भैया

माधव उन्होने वीरगति पाई है छाया। (छाया पृथ्वी पर घुटनो पर गिर जाती है। चेहरे को हाथो से ढक लिया है। जिस बीच म माधव कहे जाता है। शेखर एक दो बार घूमता है। उसके मुख से प्रकट होता है मानो डूबते को सहारा मिलनेवाला है।) तक्षशिला से चालीस मील दूर विद्रोही वीरभद्र की खोज म हूणो के दल के निकट जा पहुँचे। वहाँ उन्हे ज्ञात हुआ कि वीरभद्र हूणो से मिल गया है। उनके बीस सैनिक आगे हूणो मे फँसे हुए थे। वे तक्षशिला लौट सकते थे। परन्तु एक सच्चे सेनापति की भाँति उन्होने अपने सैनिको के तथा अपने प्राण सकट मे डाल दिए और मुझे तक्षशिला और पाटलिपुत्र को चेतावनी देने के लिए भेजा गया। मैं आज

[सहसा रुक जाता है, क्योकि उसकी दृष्टि शेखर पर जा पडती है। शेखर चौकी के पास खडा है। उसके चेहरे पर दृढ़ता और विजय का भाव है। बाहर कोलाहल कम है। शेखर अपना हाथ बढाकर अपने ग्रन्थ 'भोर का तारा' को उठाता है। इसी समय माधव की दृष्टि उस पर पडती है। शेखर पुस्तक को कुछ देर चाव से, बिछुडने से पूर्व, प्रेम से देखता है। उसके बाद आगे बढकर अँगीठी के निकट जाकर उसमे जलती हुई अग्नि को देखता है और धीरे धीरे उस पुस्तक को फाडता है। इस आवाज को सुनकर छाया अपना मुख ऊपर को करती है।]

छाया (उसे फाडते हुए देखकर) शेखर !

[लेकिन शेखर ने उसे अग्नि मे डाल दिया है । लपटें उठती हैं ! छाया फिर गिर पडती है। शेखर लपटो की तरफ देखता है। फिर छाया की ओर दृष्टिपात करता है, एक सूखी हँसी के बाद बाहर चल देता है। कोलाहल कम होने के कारण उसके पैरो की आवाज़ थोडी देर तक सुनाई देती है ।]

[माधव द्वार की ओर बढता है]

(अत्यन्त पीडित स्वर मे) माधव, तुमने तो मेरा प्रभात नष्ट कर दिया ।

[माधव उसके शब्द सुनकर बाहर जाता-जाता रुक जाता है। मुडकर छाया की ओर देखता है, पीछे की खिडकी के निकट जाकर उसे खोल देता है। इससे बाहर का कोलाहल स्पष्ट सुनाई देता है। शेखर और उसके साथ पूरे जन-समूह के गाने का स्वर सुन पडता है।]

"नगाडे पै डका बजा है, तू शस्त्रो को अपने सँभाल
बुलाती है वीरो को तुरही, तू उठ कोई रास्ता निकाल।"

[शेखर का स्वर तीव्र है। माधव खिडकी को बन्द कर देता है, पुन शान्ति । इसके बाद तुरन्त दृढ स्वर मे बोलता है।]

माधव छाया, मैंने तुम्हारा प्रभात नष्ट नही किया। प्रभात तो अब होगा। शेखर तो अब तक 'भोर का तारा' था। अब वह 'प्रभात का सूर्य' होगा।

[छाया धीरे-धीरे अपना मस्तक उठाती है।]

[परदा गिरता है।]

# आखिरी चिट्ठी

□

निश्तर खानकाही

---

[गुरदासपुर के निकट एक सुनसान स्थान, जहाँ आतकवादियो द्वारा बनाए गए तहखाने मे क्राति-कारी नेता बलदेव सिंह मान, सामाजिक कार्य-कर्त्ता सुभद्रा सेठी तथा बलदेव सिंह मान का एक अन्य साथी प्रकाशवीर हाँडा आतकवादियो के घेरे मे रस्सियो से बँधे बैठे हैं। तीनो के हाथ कमर से बाँध दिये गए हैं। चारो ओर खौफ और सन्नाटे का वातावरण है। आतकवादियो का सरगना अजमेरा सिंह अड्डेवाल हाथ मे स्टेनगन लिये भारी-भारी कदमो से टहल रहा है, कई आतकवादी आस-पास खडे हैं]

**अजमेरासिंह अड्डेवाल** (कहकहा लगाते हुए स्टेनगन से एक फायर करता है) मान ! क्या तुम यह आवाज सुनते हो ?

**बलदेवसिंह मान** नही, मैं यह आवाज़ नहीं सुनता। (ऊँची आवाज मे) हाँ, स्टेनगन की यह आवाज अपने पीछे जो सन्नाटा छोड जाती है, उसे ज़रूर महसूस करता हूँ।

**अड्डेवाल** सन्नाटा ? सन्नाटे से क्या मतलब है तुम्हारा ?

**बलदेवसिंह मान** वही सन्नाटा, जो यह आवाज अपने अन्त मे छोड जाती है। कब्रिस्तान और श्मशान जैसा सन्नाटा ?

**अड्डेवाल** तुम्हे इस आवाज़ से डर नही लगता ?

**बलदेवसिंह मान** (व्यग्य से हँसते हुए) डर ? किससे ? क्या उस बदूक से, जो अपने आपको जीवित रखने के लिए बस्ती से दूर एक

तहखाने का सरक्षण लिये हुए है। उस आदमी से डर ? जो खुद कानून के डर से इस निर्जीव जगल मे अपने आपको छुपाए हुए है।

अडडेवाल (क्रोध से) सुअर दा पुत्तर, यह ठीक नही होगा (अपने साथिया की ओर इशारा करते हुए) लगाओ हटर सुअर दी पीठ पे।

[एक आतकवादी मान को पीटना शुरू करता है]

सुभद्रा सेठी (साहस से, चीखते हुए) हर वह कोडा, जो मान की पीठ पर पड रहा है, हमे विश्वास दिला रहा है, तुम कायर ही नही, नीच भी हो।

प्रकाशवीर हांडा और यह भी मान लो कि इतिहास अपने पन्नो पर तुम्हारे मसूबो की मौत दर्ज कर चुका है। जल्द ही तुम अपने सारे साथियों सहित कूडे के ढेर पर फेंक दिये जाओगे।

अडडेवाल (मान को पिटने से रोकते हुए) बलदेव सिंह, तुम सिख परिवार मे पैदा ही क्यो हुए ? अच्छा था आँख खोलने से पहले ही मर जाते।

बलदेवसिंह मान ताकि इस बहादुर सिख कौम के भविष्य से खिलवाड करने की कुछ और आजादी तुम्हे मिल जाती, लेकिन याद रखो मान अकेला नही, अनगिनत लोग हैं, जो इस देश को, इस कौम को बचाने के लिए सर से कफन बाँधे मर मिटने को तैयार बैठे हैं।

सुभद्रा सेठी और यह भी समझ लो कि जिस घिनौने उद्देश्य को तुम लेकर चले हो, सिख जनता उसका समर्थन नही कर रही है। गिनती के चन्द लोग हैं, जो गुमराह हो गए हैं, पागल हो गए हैं, और उनमे से तुम भी एक हो।

अड्डेवाल (क्रोध से चीखते हुए) इस छोकरी की जबान बद करो। नही तो अगले ही पल स्टनगन की गोली इसकी छाती के पार हो जाएगी।

बलदेवसिंह मान ठीक है अड्डेवाल ! गोली चलाओ, ताकि यह बात फिर साबित हो जाए कि जिस खालिस्तान का ख्वाब

तुम देख रहे हो, अगर वह बना तो निरीह महिलाओ और मासूम बच्चो की हड्डियो पर बनेगा।

**अड्डेवाल** (गुस्से से पागल होते हुए) बकवास बद नही करोगे? तुम जैसे लोग ही सिख कौम के दुश्मन हैं, गद्दार हैं।

**बलदेवसिंह मान** गद्दार हम नही हैं, तुम हो, तुम, जो चद झूठे ख्वाबो के लिए, चद सिक्को के लिए अपनी आत्मा और अपना जमीर सब कुछ बेच चुके हैं।

**सुभद्रा सेठी** (नर्म लहजे मे) क्या तनहाई मे तुम कभी सोचते नही कि जो काम तुम कर रहे हो, उसका नतीजा इस देश के लिए कितना भयानक हो सकता है।

**अड्डेवाल** मैं तुझसे राजनीति नही सीख रहा हूँ, छोकरी चुप रह।

**प्रकाशवीर** अड्डेवाल। सवाल राजनीति का नही, इस बात का है कि जिस आतकवाद का सहारा लेकर तुम अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति करने निकले हो, वह इस देश के और सिख जनता के हित मे नही है।

**अड्डेवाल** अच्छा! सरकारी बोली बोल रहा है। यह नही जानता कि इस सरकार मे सिख जनता गुलामो-जैसी जिंदगी गुजार रही है।

**बलदेवसिंह मान** अच्छा। यह तुम कह रहे हो, जो खुद विदेशी शक्तियो के हाथो बिके हुए हो। साम्राज्यवादियो का खिलौना बने हुए हो।

**अड्डेवाल** अच्छा! अच्छा। कार्ल मार्क्स की नाजायज औलाद! तू यो नही मानेगा। बता तेरे साथ कौन-कौन लोग हैं और कहाँ-कहाँ छुपे हुए हैं। पहले तुम्ही से निपटना होगा।

**बलदेवसिंह मान** तुम समझते हो, क्या इतनी आसानी से तुम यह सब पूछ पाओगे! याद रखो पजाब के एक कोने से दूसरे कोने तक क्रान्तिकारी फैले हुए हैं [illegible] की इस म[illegible] दीवार को तुम नही तो[illegible] मान म[illegible] तो सत्तर लाख मान औ[illegible] तक पैदा होते रहेगे, [illegible] मा सफाया [illegible] मे।

**अड्डेवाल** [illegible] से) तीनो [illegible]

[एक तग और अँधेरी कोठरी मे तीनो क्रान्तिकारी खामोश बैठे हैं। तीनो के हाथ पीछे कमर के साथ बधे है]

**सुभद्रा सेठी** मान ! यहाँ से निकलने का उपाय सोचो ? उस दिन अगर तुम निहत्थे आतकवादियो के गिरोह से भिड न जाते तो हम तीनो गिरफ्तार नही हो सकते थे।

**बलदेवसिंह मान** लेकिन अगर हम भिडते नही तो खुराना जी का सारा परिवार इन गुण्डो के हाथो कत्ल कर दिया जाता।

[दृश्य परिवर्तन, फ्लैश बैंक मे]

**रामलाल खुराना** (पुलिस स्टेशन मे आतकवादियो का पत्र पुलिस इस्पेक्टर को दिखाते हुए) साहब, मेरी रक्षा कीजिए, यह तीसरी बार धमकी-भरा पत्र मिला है मुझे।

**इस्पेक्टर गिल** (हाथ बढाकर खत लेते हुए) क्या लिखा है, इसमे ?

**रामलाल खुराना** (जोर-जोर से खत पढते हुए) "अब इसमे कोई सदेह नही रह गया है कि गुरमीतसिंह खालसा की मौत के जिम्मेदार तुम हो। तुम्हारे ही कारण वह पुलिस मुठ भेड मे मारा गया। अब इसमे भी कोई शक नही रहा है कि तुम पुलिस के पालतू कुत्ते हो, पुलिस के मुखबिर हो, तुम्हारा अपराध क्षमा योग्य नही है, तुम शीघ्र ही अपने पूरे परिवार सहित मौत के घाट उतार दिए जाओगे। अजमेरासिंह अड्डेवाल।"

**इस्पेक्टर** पजाब पुलिस और केन्द्रीय सुरक्षा बल दोनो काफी सतर्क हैं, और जहाँ तक सम्भव है, आतकवादियो की धड पकड भी कर रहे हैं, लेकिन

**रामलाल खुराना** लेकिन मैं बहुत खतरे मे हूँ साहब ! मेरी मदद कीजिए।

**इस्पेक्टर** लेकिन यह कैसे सम्भव है कि एक एक घर पर पुलिस का पहरा लगा दिया जाए ! इतनी फोर्स हमारे पास है कहाँ ? कुछ तो आप लोगो को भी करना चाहिए !

**खुराना** हम कैसे अपना बचाव कर सकते हैं, साहब ?

**इस्पेक्टर** अगर सारे लोग मिलकर आतकवादियो का मुकाबला करें तो उनका मनोबल टूट जायेगा, वह भाग खडे होंगे।

खुराना निहत्थी जनता इन हथियारबन्द डाकुओ का मुकाबला कैसे कर सकती है ?

इस्पेक्टर कर क्यो नही सकती, कर सकती है। सर झुकाकर मौत के घाट उतरने से बेहतर है, लडते-लडते शहीद हो जाओ। आतकवादी आखिर हैं कितने ? मुट्ठी-भर।

खुराना मुट्ठी-भर आतकवादी पुलिस फोर्स के बस मे नही आ रहे हैं, जनता के बस मे आ जायेंगे ?

इस्पेक्टर सबसे बडी ज़रूरत सगठित होने की है, एकजुट होने की है। आतकवादी तुम्हारे ही भाई-बेटे हैं, उनका सामाजिक बहिष्कार कर, उन्हे सरक्षण मत दो। पुलिस का उनके ठिकानो का पता बताओ। माए ऐसे पुत्रो से नाता तोड लें, जो आतकवाद फैला रहे हैं, बाप ऐसे पथभ्रष्ट पुत्रो को सजा दिलवाने के लिए आगे बढे, यह समस्या अकेले पुलिस से नही, जनता के सहयोग से हल होगी।

खुराना तब जनता को बिना शर्त हथियार दीजिए और आप लोग एक तरफ हटकर खडे हो जाइए।

इस्पेक्टर इससे तो पजाब मे खानाजगी की आग भडक उठेगी। बदले की भावना से लोग एक-दूसरे की हत्या करेंगे ? हिंसा का इलाज हिंसा नही है। विरोध की आवाज मे बदूक की गोली से ज्यादा शक्ति होती है।

खुराना : विरोध की आवाज़ ? (व्यग्य से हँसता है) यहाँ लोगो की जान पर बनी है और आप उपदेश दे रहे हैं।

इस्पेक्टर उपदेश नही दे रहा हूँ, मैं सिर्फ यह कह रहा हूँ कि समाज के हर वर्ग की ओर से हर सतह पर आतक-वादियो का विरोध होना चाहिए। उन्हे यह एहसास दिलाया जाना चाहिए कि जो कुछ वह कर रहे हैं, वह उनके हित मे नही है, वे भटके हुए लोग हैं।

खुराना : लेकिन इस समय लोग बुरी तरह आतकित हैं। और इसमे भी कोई शक नही कि सिख जनता का एक वर्ग उनकी पीठ पर है। इनमे से अनेक लोग बहुत प्रभाव-शाली हैं।

इस्पेक्टर मोहल्ले-मोहल्ले आतकवाद-विरोधी समितियाँ बनाओ। लोगो को विश्वास दिलाओ कि जनता की सुसगठित

शक्ति को यह मुट्ठी भर आतकवादी खडित नही कर सकते ।

**खुराना** . यह तो ठीक है, इंस्पेक्टर साहब ! लेकिन शीघ्र ही कुछ होना चाहिए। मुझे डर है, आतकवादी जल्द ही हम पर आक्रमण करेंगे ।

**इंस्पेक्टर** · ठीक है, मैं दो सिपाही तुम्हारी सुरक्षा के लिए तैनात करता हूँ, तुम जाओ । और हाँ, आतकवादियो के किसी और ठिकाने का पता चले तो हमे सूचित करना। तुम्हारी निशानदेही पर पहली मुठभेड बहुत कामयाब रही, अब तुम जाओ ।

[रामलाल खुराना पुलिस स्टेशन से वापस अपने घर आता है । शाम के सात बज गए है। वातावरण मे हलका उजाला है। व्यापारी सरे-शाम से ही अपनी दुकानें बन्द करके घरो मे जा छुपे हैं । अचानक एक सफेद रंग की एम्बेसेडर कार रामलाल खुराना के दरवाज़े पर आकर रुकती है, और उसमे से चार आतंकवादी उतरकर खुराना के घर की ओर बढते हैं]

**अजमेरासिह अड्डेवाल** (चीखकर) दरवाजा खोलो, वर्ना काठ के यह किवाड एक झटके मे तोड दिए जाएँगे ।

**रामलाल खुराना** : (भय से काँपते हुए) कौन ? कौन हो तुम ? क्या चाहते हो ?

**अड्डेवाल** : अच्छा, सुअर दे पुत्तर ! पहचानता नही ! मौत तेरे द्वार पर दस्तक दे रही है । (स्टेनगन से हवा मे फायर करता है) अगली गोली तेरी छाती से पार हो जाने वाली है । दरवाजा खोल !

**खुराना** · सरदार, मैं निर्दोष हूँ, मुझे क्यो मारने आए हो । मेरे छोटे-छोटे बच्चे हैं।

**अड्डेवाल** : (अपने साथियो से) दरवाज़ा तोड दो। (तीनो आतंकवादी दरवाज़ा तोडने का प्रयास करते है, तभी पीछे से एक गरजदार आवाज़ आती है ।)

**आवाज** जान की खैर चाहते हो तो वापस लौट जाओ ।

**अड्डेवाल** . (घूमकर पीछे की ओर देखता है) कौन?

आवाज (कडकदार आवाज मे) मुझे नही पहचानता ? बलदेवसिंह मान। (नाम सुनकर दरवाजा तोडते हुए आतकवादी मान की ओर आकर्षित हो जाते हैं।)

अड्डेवाल मान ! तुम मेरे रास्ते मे मत आओ, वर्ना (स्टेनगन हवा मे लहराते हुए) एक गोली तुम्हे मौत की नीद सुलाने के लिए काफी है।

बलदेवसिंह मान अड्डेवाल ! गोली हाड-मास को तोडती है ! लोहे को नही। और जिस छाती को तुम लक्ष्य बना रहे हो, वह हाड-मास की नही, फौलाद की है।

अड्डेवाल लगता है, बुलटप्रूफ जैकेट पहने है, सुअर दा पुत्तर। (अपने साथियो की ओर सकेत करते हुए) बाँध कर ले चलो इन सबको।

[चारो आतकवादी बलदेव सिंह मान, सुभद्रा सेठी और प्रकाशवीर हाडा को जबरन पकडकर गाडी मे धकेल देते हैं। गाडी फर्राटे भरते हुए एक सुनसान रास्ते की ओर मुड जाती है।]

[दृश्य परिवर्तन, वही तहखाना। तीनो क्रान्तिकारी आपस म वार्ता करते हुए]

प्रकाशवीर मान! आतकवादियो की कैद मे यो बेबसी के साथ मरना ठीक नही है। हम एक साथ लडते-लडते मौत से गले मिलेंगे।

सुभद्रा : लेकिन पहले यहाँ से निकलने की तरकीब सोचो।

मान : बाहर आतकवादियो का पहरा है। वह किसी भी पल हमे गोलियो से भून सकते हैं।

प्रकाशवीर इस तहखाने म कोई चोर रास्ता जरूर होना चाहिए, जहाँ से हम निकल सकते हैं।

मान तुम ठीक कहते हो। पुलिस से बच निकलने के लिए एक न एक रास्ता अवश्य रखा गया होगा इस सुरग में।

सुभद्रा मैं जाकर देखती हूँ, तुम चौकस रहना।

बलदेवसिंह मान ठीक है, जाओ। लेकिन जरा होशियार रहना। हम तुम्हारा इशारा पाते ही इस काल-कोठरी से भाग निकलेंगे।

[अचानक अजमेरा सिंह अड्डेवाल कोठरी मे प्रवेश करता है। कंधे से स्टेनगन लटकी हुई है।]

**अजमेरासिंह अड्डेवाल** : कहो जी, क्रान्तिकारियो, तुम्ही किस हाल मे हो।

**बलदेवसिंह मान** : प्रतीक्षा कर रहे हैं कि तुम्हारी गोली कब हमारी छातियो के पार होती है।

**अड्डेवाल** (स्टेनगन हवा मे लहराते हुए) यो नही मानोगे ?

**बलदेवसिंह मान** नही ! लेकिन मरने से पहले दो बात तुमसे करना चाहता हूँ।

**अजमेरासिंह अड्डेवाल** बोलो।

**बलदेवसिंह मान** जो लक्ष्य तुम लेकर चले थे, वह पूरा होने वाला नही है। तुम भटक गए हो, भ्रमित हो गए हो।

**अड्डेवाल** भ्रमित हम नही हुए हैं, बलदेवसिंह मान, तुम हुए हो, अब वह दिन बहुत करीब है, जब पंजाब की धरती पर खालिस्तान का झण्डा लहरा रहा होगा, लेकिन उसे देखने के लिए तुम जीवित नही रहोगे।

**बलदेवसिंह मान** यह तुम्हारी भूल है, तुम नही जानते कि नफरत के जो बीज तुम बो रहे हो, उसकी फसल इस धरती पर पैदा नही होगी।

**अड्डेवाल** नफरत की नही, धर्म की, यह फसल अवश्य पैदा होगी, लेकिन तुम अधर्मियो के लिए, सिख कौम के लिए।

**बलदेवसिंह मान** (व्यंग्य से हँसते हुए) सिख कौम के लिए। कैसी अजीब बात है, सिख कौम की बात वह कर रहा है, जो सिखो के इतिहास से वाकिफ नही है ?

**अड्डेवाल** और कौन वाकिफ है, तुम ? अकेले तुम ?

**बलदेवसिंह मान** हाँ मैं, केवल मैं, जो इतिहास की इस सच्चाई से परिचित है कि खालसा पन्थ की स्थापना गुरु गोविन्द सिंह ने इस उद्देश्य से की थी ताकि धर्म की रक्षा हो सके और तुम धर्म की मान्यताओ को ही नष्ट करने पर तुले हुए हो।

**अड्डेवाल** . तुम्हारा धर्म से कुछ लेना-देना नही, तुम नास्तिक हो, तुम एक ऐसी शान्ति चाहते हो जिसमे धर्म का कोई स्थान नही है।

**बलदेवसिंह मान** : और तुम ? एक ऐसा खालिस्तान, जो निरीह महिलाओ,

मासूम बच्चो और निर्दोष व्यक्तियो की लाशो पर तामीर होगा, अगर हुआ तब ?

**अड्डेवाल** बकवास बन्द करो।

**बलदेवसिंह मान** (प्यार से समझाते हुए) अड्डेवाल, तुम नही जानते, सौ वर्ष पहले जो विष अंग्रेज ने घोला था, उसका कड़ुआ प्याला तुम पी रहे हो, उसने हिन्दू और मुसलमान ही मे नही, सिख और हिन्दू के बीच भी खाई पैदा करने की कोशिश की और मुझे लगता है वह अपने उद्देश्य म कामयाब हो गया है।

**अड्डेवाल** बहुत हो चुका, सारा दोष अंग्रेज के सर पर डालकर तुम उन समस्याओ को हल नही कर सकते जो आज सिख कौम के सामने है।

**बलदेवसिंह मान** कौन-सी समस्याएँ ? सिख कौम की कोई अलग समस्या नही है। वही साझी समस्याएँ हैं, जो आज सारे देश की जनता के सामने हैं।

**अड्डेवाल** मान ! मुझे शर्म आती है, तुम सिखो मे पैदा क्यों हुए ?

**बलदेवसिंह मान** तुम्हे यह बताने के लिए कि आज से लगभग १०० वर्ष पहले, वह एक अंग्रेज़ न्यायाधीश था पजाब का, मिस्टर मैकालिफ जिसने १८९० मे सबसे पहले यह नारा दिया कि सिख एक अलग धर्म है, एक अलग कौम है।

**अड्डेवाल** उसने ठीक कहा था।

**बलदेवसिंह मान** ठीक नही कहा था, एक साजिश की थी। उसने गुरुग्रन्थ साहब का अंग्रेजी म अनुवाद किया और लिखा कि सिख हिन्दुओ से अलग एक कौम है। उसने अमरीका, आस्ट्रेलिया और यूरोप म रह रहे सिखो के दृष्टिकोण को बदलना चाहा, उसने एक ऐसे अलगाववाद की बुनियाद रखी, जिसकी विरासत तुम तक पहुँची है।

**अड्डेवाल** मैं नही समझा, तुम क्या कहना चाहते हो ?

**बलदेवसिंह मान** मेरी बात साफ है। इस अलगाववाद की बुनियाद एक विदेशी के हाथों रखी गई थी, और यही कारण है कि तुम्हारे आदोलन की जड़ें इस देश की धरती मे नहीं, साम्राज्यवादी देशों की धरती मे हैं।

**अड्डेवाल** चुप रहो, मार्क्स के कुत्ते ?

बलदेवसिंह मान — (साहस के साथ हँसते हुए) तुम खुलकर मुझे गालियाँ दे सकते हो, क्योंकि यही तुम्हारी सभ्यता है। लेकिन कैसे अचम्भे की बात है कि मैकालिफ ने यह तो लिखा कि सिख हिन्दू स अलग कौम है, और यह बात वह भूल गया कि महाराजा रणजीत सिंह ने जगन्नाथ पुरी को कोहनूर हीरा और काशी विश्वनाथ मंदिर को कई मन सोना भेंट किया था, वह यह बात भूल गया कि सिखों ने हिन्दू धर्म की रक्षा की थी

अड्डेवाल — (क्रोध में) अपना भाषण बन्द करो। कमीन के बच्चे ! तुम नही जानते कि आज सिख कौम भारत मे गुलामो-जैसी जिन्दगी गुजार रही है। उसका अस्तित्व खतरे मे है।

बलदेवसिंह मान — (ऊँचे स्वर मे) गुलामी की जिन्दगी सिख कौम नही, तुम और तुम्हारे साथ के आतंकवादी गुजार रहे हैं, जो बिक गए हैं उन विदेशी शक्तियो के हाथो, जो भारत को तोड देना चाहती हैं, खडित कर देना चाहती हैं।

अड्डेवाल — हम खालिस्तान लेकर रहेगे। आजाद होकर रहेगे, और इस रास्ते मे जो भी हमारे सामने आयेगा, उसका सफाया कर देंगे। मुगल हुकूमत हमारी शक्ति देख चुकी है, अब भारत सरकार भी देख ले।

बलदेवसिंह मान — अड्डेवाल ! तुम बहुत मूर्ख हो, जिस खालिस्तान की बात तुम कर रहे हो, उसकी भौगोलिक, सामाजिक और राज-नीतिक स्थिति तक का तुम्हे ज्ञान नही तुम उसी डगर पर चल रहे हो, जिस पर चलकर आज पाकिस्तान विदेशी शक्तियो के हाथ की कठपुतली बना हुआ है।

अड्डेवाल — कठपुतली नही, वह आज एक आजाद और मजबूत देश हैं। एटमी शक्ति से लैस।

बलदेवसिंह मान — कान खोलकर सुन लो अड्डेवाल ! इस देश का अब और बँटवारा नहीं होगा। हरगिज नही होगा, इस देश को खालिस्तान की नही, एक बडी क्रान्ति की आव-श्यकता है। एक इन्कलाब आ चुका, एक इन्कलाब और आएगा।

अड्डेवाल — इससे पहने कि यह इन्कलाब आये, बताओ, तुम्हारी आखिरी इच्छा क्या है ?

बलदेवसिंह मान — आखिरी इच्छा ? क्या तुम मुझे मार डालना चाहते हो ?

अड्डेवाल — तुम्हे ही नही (दोनो क्रान्तिकारियों की ओर इशारा करते हुए) इसे और इसे भी—लेकिन मौत से पहले तुम्हे बताना होगा कि तुम्हारे लोग कितने हैं और कहाँ-कहाँ हैं ?

बलदेवसिंह मान — तुम उनके बारे मे क्यो जानना चाहते हो, क्या वह इतनी आसानी से तुम्हारे हाथ आ जाएँगे ?

अड्डेवाल — मान ! हम जानते हैं कि हमारे रास्ते की सबसे बडी रुकावट तुम क्रान्तिकारी लोग हो, तुम रास्ते से हट जाओ तो हमे, हमारा उद्देश्य पाने से कोई ताकत नही रोक सकती।

बलदेवसिंह मान — लेकिन यह नामुमकिन है, यह बिलकुल नामुमकिन है।

अड्डेवाल — तब तुम अपने साथियो सहित मरने के लिए तैयार हो जाओ।

बलदेवसिंह मान — कैद मे डाल कर मार देना कौन-सी बहादुरी है, सामने आकर मुकाबला करो।

अड्डेवाल — मुकाबला बहादुरो से होता है, मक्खी-मच्छरो से नही। उन्हे तो सिर्फ मसला जाता है, जैसे अब मैं तुम्हे मसल कर फेंक देने वाला हूँ।

सुभद्रा सेठी — मान ! तुम किन लोगो से बहादुरी की आशा करते हो, क्या उनसे जो मजबूर औरतो और निरीह बच्चो को मारकर उनकी लाशो पर कुत्तो की तरह पेशाब करते हो।

अड्डेवाल — ऐ, छोकरी, जबान बद कर, नही जानती किससे बात कर रही है ?

सुभद्रा सेठी — (निर्भीक होकर) जानती हूँ, तुम वह हो, जिन्हें धर्म के झूठे नशे ने पागल कर दिया है। जो आज माँ की चीत्कार और बहन की पुकार भी सुनने के योग्य नही रहे हैं। जो निर्दोष यात्रियो को जिबह करते हैं और खुश होते हैं कि हम बहादुर हैं।

अड्डेवाल — (चीखकर) चुप कर ! वर्ना तेरा हाल भी वही होगा, जो अब तक तेरी जैसी अनेक छोकरियो का हो चुका है। (घूमकर बलदेव सिंह मान को सम्बोधित करते हुए) मान, रात-भर का समय तुम्हारे पास है। अपने सभी

साथियो की लिस्ट, उनके नाम और पते सहित लिखकर मुझे दो ताकि सुबह की पहली किरण के साथ तुम हमेशा के लिए मौत की नीद सो सको।

[अजमेरसिंह अड्डेवाल कोठरी के बाहर चला जाता है]

सुभद्रा सेठी — (धीरे से) मान! मैंने वह चोर दरवाजा देख लिया है, जहाँ से हम बाहर निकल सकते हैं।

बलदेवसिंह मान — ठीक है, आधी रात गुजरने दो।

सुभद्रा सेठी — लेकिन वहाँ एक मोटा ताला पडा है।

बलदेवसिंह मान — चिन्ता न करो, देख लेंगे।

[तीनो क्रान्तिकारी रात के अँधेरे मे तहखाने के चोर दरवाजे तक आते हैं। बलदेवसिंह मान पूरी ताकत लगाकर एक झटके के साथ ताला तोड देता है। चटाख की आवाज]

बलदेवसिंह मान — चलो भाग निकलो, और इससे पहले कि सूरज निकले, आतंकवादियो पर धावा बोल दो।

प्रकाशवीर — वर्ना वह अपने हथियारो सहित यहाँ से फरार हो जाएँगे।

सुभद्रा सेठी — कहाँ चलें?

बलदेवसिंह मान — सीधे पुलिस स्टेशन?

प्रकाशवीर — लेकिन पुलिस स्टेशन तक पहुँचने के लिए दो घण्टे से कम का समय नही लगेगा।

सुभद्रा सेठी — यहाँ से करीब का पुलिस स्टेशन कितनी दूर होगा?

बलदेवसिंह मान — कम से-कम छः किलोमीटर, चलो तेजी से आगे बढ़ो।

[तीनो सुनसान रास्ते पर तेजी से आगे बढ़ते हैं]

बलदेवसिंह मान — (थाने के द्वार पर पहरा देते हुए सिपाही से) इस्पेक्टर साहब कहाँ हैं?

सिपाही — अन्दर सोये हुए हैं।

बलदेवसिंह मान — तुरन्त जगाओ! आतकवादियो के एक बहुत बडे ठिकाने का पता लग गया है।

सिपाही — कहाँ?

बलदेवसिंह मान   यह मत पूछो, फोर्स लेकर साथ चलो।

[पुलिस इस्पेक्टर अपने कमरे से बाहर आते हुए]

इस्पेक्टर   कौन ? बलदेवसिंह मान ? इस वक्त तुम कहाँ ? तुम्हारे बारे मे रिपोर्ट हुई थी कि आतकवादी तुम्हें तुम्हारे दो साथियो सहित उठाकर ले गए।

बलदेवसिंह मान   हाँ, हम तीनो उनकी गिरफ्त से निकल भागे हैं। आप फोर्स लेकर जल्दी चलें, वर्ना सूरज निकलने के साथ ही वह अपने हथियारो का जखीरा लेकर वहाँ से चम्पत हो जाएँगे।

[पुलिस-फोर्स के साथ सब लोग आतकवादियो के ठिकाने की तरफ चलते हैं। जीप और मोटर साइकिलो की आवाजें]

पुलिस इस्पेक्टर   वहाँ कितने लोग छुपे हुए हैं ?

बलदेवसिंह मान   छ से दस तक, लेकिन हथियारो का बहुत बडा जखीरा वहाँ है। मुठभेड काफी भयकर हो सकती है।

पुलिस इस्पेक्टर : चलो देखते हैं।

बलदेवसिंह मान : (सुभद्रा को सम्बोधित करते हुए) अगर मैं इस मुहिम मे काम आ जाऊँ सुभद्रा, तो यह एक चिट्ठी है, जो मैंने अपनी उस बेटी को लिखी है, जो सिर्फ आठ दिन पहले पैदा हुई थी, यह तुम उसकी माँ को पहुँचा देना।

सुभद्रा सेठी : कैसी बातें करते हो मान ! तुम इतनी आसानी से काम आने वाले नही हो। तुम्हें तो अगली क्रान्ति तक जीना है।

[जीपें दौडती चली जाती हैं। आतकवादियो के ठिकाने पर पहुँचकर पुलिस चेतावनी देती है]

पुलिस   होशियार ! तुम चारो तरफ से घेर लिये गए हो, भागने या मुकाबला करने की कोशिश मत करना। हथियार डाल दो।

अजमेरासिंह अड्डेवाल   (अपने साथियो सहित तहखाने के बाहर झाँकते हुए) मान, कुत्ते का पिल्ला, पुलिस ले आया है। बहादुरो, हमला करो।

[पुलिस पोजीशन ले लेती है। दोनो ओर से गोलियाँ चलने की आवाजें आती हैं, फिर कुछ क्षण बाद सन्नाटा हो जाता है]

पुलिस इस्पेक्टर (सन्नाटे मे भारी आवाज से) तीन आतकवादी मारे गए, बाकी भाग निकले। लेकिन आह ! इस मुहिम मे महान देशभक्त और क्रान्तिकारी बलदेवसिंह मान भी काम आ गया।

[गैप पृष्ठभूमि मे मान के घर का दृश्य, आठ दिन की बच्ची के रोने की आवाज। एक बूढा व्यक्ति बलदेवसिंह मान की चिट्ठी पढते हुए]

बूढ़ा (खत पढते हुए) मेरी प्यारी बेटी—मैं एक ऐसी जग लड रहा हूँ, जो अगर मैं न जीत सका तो मेरे बाद आने वाली नस्ल जीतेगी। मुझे दुख है कि तुम एक ऐसे समय मे पैदा हुई हो, जब तुम्हे देख पाने की फुर्सत भी मेरे पास नही है। मुझे यह भी दुख है कि तुमने एक ऐसे समाज मे जन्म लिया है, जहाँ बेटियो का जन्म अशुभ समझा जाता है। लेकिन मुझे विश्वास है कि तुम बडी होकर इन सब रूढियो के खिलाफ लडोगी, बिलकुल अपने बाप की तरह। मेरी बेटी, मैं तुम्हारे लिए कोई विरासत नही छोडे जा रहा हूँ, केवल कुछ विचार हैं, कुछ आदर्श हैं, कुछ स्वप्न हैं, अच्छे भविष्य के, मुझे यकीन है, तुम इन्हे सभाल कर रखोगी। मेरी ख्वाहिश है कि, तुम हिन्दू, सिख या मुसलमान न बनो, एक अच्छी इसान बनो, और वह जग जारी रखो, जिसे लडते-लडते तुम्हारा बाप शहीद हो गया है।

[आवाज खामोशी के सागर मे डूब जाती है]

# वापसी



मनोजकुमार सिंह

---

**पात्र-परिचय**

सरदारा सिंह
सतनाम सिंह
लाला करमचन्द
खान चाचा
खान चाची
अतुल घोष
डॉक्टर कुमार
थानेदार
हवलदार
सिपाही न० १
सिपाही न० २

---

[मंच पर सरदारा सिंह के घर का दृश्य है। नेपथ्य से 'सारे जहा से अच्छा हिन्दुस्तान हमारा…' गाने की धुन बज रही है। सरदारा सिंह अपना एक पैर देश के विभाजन के समय हुए दंगे मे गँवा चुका है। देश को स्वतत्र हुए पूरे चालीस वर्ष होने जा रहे हैं। कल स्वतत्रता

दिवस है। आज सरदारा सिंह का बेटा सतनाम सात वर्ष बाद उच्च शिक्षा पूरी कर वापस स्वदेश आने वाला है। वह बहुत खुश है, वह बैसाखी के सहारे चलता हुआ, घर के सामानों को यथास्थान सजा रहा है। खान चाचा का प्रवेश।]

खान चाचा सलाम वालेकुम, कमाल हो गया, बुड्ढे को भी जवानी आ गई, लगता ही नहीं घर को इतना अच्छा तूने सजाया है, तू बडा बेईमान है सरदारा। सोचा था, आज अपना बेटा आ रहा है इसलिए इस घर को अपने इन हाथो से जन्नत का माफिक सजाऊँगा, और यहा···खैर छोड, एक तू है, और एक जो उधर तेरी भाभी है, सबेरे से ही नाक मे दम कर रखा है, कहती है, जल्दी बाज़ार जाओ, ये लाओ, वो लाओ, तुमको मालूम नही, आज सरदारा सिंह का बेटा सतनाम आने वाला है। खुदा कसम तेरे को क्या बताऊँ, आज तो बावर्चीखाने से ऐसी खुशबू आ रही थी कि हटने की इच्छा ही नहीं होती थी।

सरदारा सिंह खान, मैं भी कितना खुशनसीब हूँ। आज सतनाम आ रहा है, और कल स्वतत्रता दिवस है। कितना मजा आयेगा, कल जब मैं, तू और सतनाम तीनो एक साथ झडा फहराने जायेंगे, मेरी तो बस एक ही तमन्ना थी, कि सतनाम पढ-लिखकर एक बहुत बड़ा आदमी बने और अपना सारा जीवन, इस देश को समर्पित कर दे। लाला करमचन्द जब सतनाम को देखेगा तो कितना खुश होगा।

खान चाची : सलाम भाईसाहेब।

खान चाचा ' लो आ गई आफत।

चाची : हाँ-हाँ मैं तो आफत हूँ ना, लेकिन कभी सोचा है, तुम क्या हो, मैं सोच रही थी कि तुम घी लेने गये हो और इधर मियाँ गप्पें लड़ा रहे हैं। जल्दी जाके बंगाली के यहाँ से चार किलो शुद्ध घी ले आओ।

खान : अरे जाता हूँ बाबा, इतनी खफा क्यों हो रही हो। देख लिया ना सरदारा, बस आई नही कि शुरू हो गई। (खान का प्रस्थान तथा सब एक साथ हँसने लगते हैं।)

चाची : (खान की ओर इशारा करते हुए) अरे कम-से-कम आज के दिन तो आलसीपन छोड़ो। (सरदारा की ओर इशारा करते हुए)

भाई साहब, अब सतनाम को आने मे कुछ ही समय रह गया है, आप भी तैयार हो जाइए। कितने बरस हो गए सतनाम को देखे हुए। बहुत दिल मचल रहा है, उसे देखने के लिए। पूरे सात बरस हो गये उसको देखे हुए। (हँसते हुए) अब तो वह बहुत बदल गया होगा ना? उस समय तो उसकी दाढी मूँछे भी नही आई थी।

सरदारा सिंह — बहन वह कितना भी बदल जाये, मगर हम लोगो के लिए तो वह, वही छोटा-सा सतनाम है। उसका भी तो दिल कितना मचल रहा होगा, हम सबो से मिलने के लिए। हम सबा को एक साथ देखकर वह कितना खुश होगा?

खान चाचा — लो बेगम, आ गया तुम्हारा घी और घी वाला। बाबू मोशाय खुद लेकर आया है।

अतुल घोष — नोमस्कार सोदार जी, नोमस्कार भाभी। आमी भी सोचा कि फोरन म तो सतनाम बेटा को शुद्ध घी मिलता नही होगा, सेई जोनने आमी ये चार किलो शुद्ध गाई का घी लाया। सोतनाम बेटा कहाँ है?

सरदारा सिंह — अर अतुल घोष, यहाँ तो सबकी आँखें उसी की राह देख रही हैं। अब तक तो कमबख्त को आ जाना चाहिए था। (बाहर किसी वाहन के आने और रुकने की आवाज)

खान — लो, शायद सतनाम आ गया। (सब एक साथ दरवाजे की ओर बढ़ते हैं। दरवाजे से सतनाम का प्रवेश। उसके चेहरे पर एक अजीब आक्रोश का भाव है। वह एकदम शान्त, सबकी आशा के विपरीत घर के अन्दर प्रवेश करता है। फिर भी खान चाचा झट से उसके हाथो का सामान ले लेते हैं तथा खुशी से नाचने लगते हैं। सरदारा सिंह सतनाम को गले से लगा लेता है। परन्तु सतनाम बिलकुल निष्ठुर खड़ा रहता है।)

सरदारा सिंह — अरे बेटे तूने, इनको नही पहचाना, अरे ये वही खान चाचा हैं, और इधर देख ये खान चाची, और ये अतुल घोष जिसे तू बंगाली चाचा कहा करता था। देख सब तुझसे मिलने आये हैं।

[सतनाम बिना कोई उत्तर दिए सबकुछ अनसुना करके एक ओर बढ़ जाता है। सरदारा सिंह भौंचक्का-सा उसे देखते रह जाता है।]

खान : अरे सरदारा तू ऐसा खड़े-खड़े क्या ताक रहा है? अरे बेटा

विदेश से आया है, थक गया होगा, आराम करने दे। जा तू भी आराम कर। (चाची और घोष की ओर इशारा करते हुए) अरे तुम लोग क्या देख रहे हो, सतनाम कहीं भागा जा रहा है। अरे अब तो वह हमेशा के लिए हम लोगो के पास आ गया है। जाओ बाद म मिलना। जाकर अपना काम करो। हां और ये घी लेती जाओ। (चाची और अतुल घोष का प्रस्थान)

सरदारा सिंह — खान, मे सतनाम को क्या हो गया ? मुझे तो कुछ गडबड लगती है। आखिर ये सब क्या हो रहा है ?

खान — अरे तेरा दिमाग तो कुछ भी सोच लेता है। अरे ओ अपना सतनाम है, उसको क्या होगा। बस यूँ ही, कुछ थक गया होगा। तू भी तो अजीब है, जा आराम कर। या मेरे साथ चल, देखें तो सही तेरी भाभी क्या क्या बना रही है। (सरदारा सिंह एव खान का प्रस्थान) (उन दोनो के जाते ही सतनाम का अन्दर वाले कमरे से प्रवेश होता है। उसके मनोमस्तिष्क म साम्प्रदायिकता की ज्वाला जलती रहती है। उसके हाथो मे राइफल है। वह मन ही-मन कुछ सोचता रहता है। इतने म सरदारा सिंह का घर के अदर प्रवेश होता है। वह सतनाम के हाथो मे बन्दूक देखकर एकदम हैरान रह जाता है। उसे अपनी सारी कल्पनाएँ टूटती हुई महसूस होती हैं। सतनाम सरदारा सिंह को देखकर सकपका-सा जाता है।)

सरदारा सिंह — यह क्या बेटे ! मैंने तो तेरे हाथ म कलम देकर तुझे ऊँची तालीम लेने विदेश भेजा था। पर यह सब तेरे हाथो मे यह बन्दूक शोभा नही देती, यह देश हमारा है बेटे, हम इस देश के नागरिक हैं, फिर अपने देश मे ही, हम किसका डर ! फेंक दे इसे।

सतनाम — पिताजी, यदि इसे फेंक दिया तो फिर देश की रक्षा कैसे करूँगा ?

सरदारा सिंह — बेटे, देश की रक्षा के लिए हमारी सेना हर सीमा पर तैनात है। और फिर अभी तक कोई माई का लाल पैदा नही हुआ है, जो हमारी भारत माँ की ओर बुरी नजर डाले। जिस दिन ऐसा होगा उस दिन सरदारा उसकी दोनो आँखें फोड देगा।

सतनाम — (बीच मे बात काटते हुए) बस कीजिए पिताजी। इसी बात का तो अफसोस है कि जिस देश की बात मैं कह रहा हूँ, वह आपकी भारत माँ नही बल्कि हमारा खालिस्तान है। खालिस्तान पिताजी। शायद आपको मालूम नहीं, आज स 40 वर्ष पूर्व जब अंग्रेजी हुकूमत का अत हुआ तब मुसलमानो को पाकिस्तान

मिला, हिन्दुओ को हिन्दुस्तान मिला, पर आपने कभी यह सोचा है कि हम सिक्खो को क्या मिला ? पिताजी, हमारा सिक्ख धर्म अभी तक गुलाम है। मैं इस गुलामी की जजीर को तोडकर अपने धर्म को आजाद कराऊँगा। मैं एक स्वतन्त्र देश खालिस्तान का गठन करूँगा। इसके लिए मुझे हजारो हिन्दुओ का खून भी क्यो न वहाना पडे। और उससे बढकर बात तो यह है पिताजी कि हमे यह सब करने के लिए विदेशो से भारी रकम मिली है। (सूटकेस खोलते हुए) यह देखिए पिताजी, आपने इतनी दौलत की कल्पना अपने जीवन मे कभी नही की होगी।

सरदारा सिंह — बन्द कर अपना यह भाषण। कोई इस देश की एकता एव अखडता के विरुद्ध एक शब्द भी बोले, यह मैं कभी बर्दाश्त नही कर सकता। मुझ बुड्ढे को ही तू ज्ञान दे रहा है जिसने अपनी सारी जिन्दगी इस देश की सेवा मे व्यतीत कर दी। तू देशद्रोही है। जब तू इस देश का नही हो सकता तो तेरे से कोई उम्मीद रखना बेकार है। निकल जा मेरे घर से। तुझ जैसे बागी के लिए मेरे पास कोई जगह नही है। दूर हो जा मेरी नजरो से।

सतनाम — मैं जा रहा हूँ पिताजी, लेकिन फिर वापस आऊँगा, आप जरा ठडे दिमाग से मेरी बातो पर विचार कीजिएगा। जब आपको वास्तविकता मालूम होगी तब आप स्वय मेरे पास चलकर आओगे। मैं उस दिन का इतजार करूँगा। (सतनाम का प्रस्थान)

[खाना चाचा दरवाजे पर खडे-खडे इनकी सारी बातें सुन लेते हैं। सतनाम जाते समय खान चाचा से टकरा जाता है। सरदारा सिंह खान को देखकर फफक-फफक-कर रोने लगता है। खान उसे सान्त्वना देता है।]

खान — ओ सरदारा, ये क्या, तुम रोते हो मेरे दोस्त ! अरे उसका क्या, जवानी का खून है, थोडा उबलकर शान्त हो जाएगा। वो क्या मेरा बेटा नही है ! तू क्या सोचता है, उसकी बातो से मुझे दु ख नही हुआ ? मत रो मेरे यार, मत रो, चुप हो जा। (खान की आँखो म आँसू आ जाते हैं।)

सरदारा सिंह — (आँसू पोछते हुए) खान अब तक तूने जो भी देखा या सुना, भाभी को कुछ मत बताना। वास्तविकता तो ये है, मेरे यारा कि आज मुझे अपने आप पे गुस्सा आ रहा है। तू अक्सर पूछा करता है ना, ये लाला करमचन्द कौन है ? जिसे तू अपनी जान

से भी ज्यादा प्यार करता है। तो सुन, लाला करमचन्द ही सतनाम का असली बाप है, मैंने तो सिर्फ उसे पाला है। लाला ने मुझसे वचन लिया था कि मैं सतनाम को यह वास्तविकता कभी न बताऊँ। उसने कहा था कि समय आने पर वह स्वय उसे सब कुछ बता देगा।

खान चाचा (आश्चर्य से) ये क्या कह रहा है। मेरे दोस्त, मुझे बिलकुल भी यकीन नही हो रहा है। जिस सतनाम को हम'''नही सरदारा कह दे ये सब झूठ है।

सरदारा सिंह यह सच है, खान। मैं किसी के वचन मे बँधा हुआ हूँ। अगर आज सतनाम मेरा अपना सगा बेटा होता तो मैं उसे इतना कुछ कहने के पहले ही उसका गला घोट देता।

बात उस समय की है दोस्त, जब चन्द लोगो ने षड्यन्त्र करके भारत माँ के टुकड़े कर दिये थे। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान को एक-दूसरे से अलग कर दिया था। उस समय सारा देश साम्प्रदायिकता की आग मे जल रहा था। उन दिनो लाला करमचन्द लाहौर मे रहा करता था। उसने एक अनाथ मुसलमान लडकी सलमा से शादी की थी। दगे के समय कुछ विद्रोहियो ने सलमा की जान सिर्फ इसलिए ले ली कि उसने एक हिन्दू लडके से शादी की थी, सलमा की मौत के समय सतनाम मात्र दो महीनो का था। उसके मरते ही लाला करमचन्द सतनाम को लेकर हिन्दुस्तान चला आया। परन्तु यहाँ पर भी उसे लोगो ने चैन से जीने न दिया। सिर्फ इसलिए कि उसने एक मुसलमान लडकी से शादी की थी। तब लाला सतनाम को मेरे हवाले करके, बदले की आग मे कूद पडा और इस तरह वह भी बागी बन गया। मैं अपना एक पैर दगे मे खो बैठा था। बाद मे वह पुलिस के हाथो पकडा गया। वह नही चाहता था कि इसके बीते हुए दिन उसके बेटे के भविष्य मे आडे आयें। इसी कारण उसने यह राज छुपाए रखने को कहा था। (लाला करमचन्द का आगमन) उसके सर पर चोट के निशान हैं। उसकी बाईं भुजा से खून बह रहा है, खान और सरदारा लाला की ऐसी हालत देखकर एकदम से घबरा जाते हैं। दोनो एक-साथ आगे बढकर उसे थाम लेते हैं।)

लाला मेरे भाई, तेरी यह हालत किसने बनाई, मैं उसका खून पी जाऊँगा। तूने आने मे बहुत देर कर दी।

खान (बीच मे ही) सरदारा, यह फालतू बात करने का समय नही है। तू लाला का ख्याल रख, मैं अभी डॉक्टर को लेकर आता हूँ।

करमचन्द मुझे कुछ नही हुआ सरदारा सिंह, आज मैं बहुत खुश हूँ। आज सतनाम से सब कुछ बता दूंगा कि मैं ही तेरा अभागा बाप हूँ। कहाँ है, मेरा बेटा सरदारा? मैं तुम्हारा एहसान जिन्दगी-भर नही भुला पाऊँगा।

सरदारा सिंह सतनाम बिलकुल ठीक है, पर तुझे यह क्या हुआ, कुछ तो बोल।

लाला कुछ नही सरदारा। आज इतिहास पुन दोहरा रहा है, आज फिर से भाई-भाई को नही पहचान रहा है। पुन एक बार भारत माँ के टुकडे करने की साजिश चल रही है। सिख और हिन्दू दोनो ही एक-दूसरे के खून के प्यासे हो गए हैं। लेकिन बेटे के आने की खबर सुनकर मैं अपने आपको रोक न सका और हिंसा की ज्वाला को लांघता हुआ अपने बेटे से मिलने चला आया। बस रास्ते मे एक बागी मिल गया" (लाला दर्द से कराह उठता है)

सरदारा सिंह लाला तेरी हालत बहुत गभीर है, सतनाम तो नही है, पर यह देख उसकी तस्वीर। तू आराम कर, मैं अभी सतनाम को लेकर आता हूँ। (सरदारा का प्रस्थान। लाला करमचन्द सतनाम की तस्वीर को अपन गले से लगा लेता है, इतने मे सतनाम का गुस्से स हाथ मे रायफल लिये हुए प्रवेश)

सतनाम अच्छा तो बुड्ढे, तू मेरे ही घर म छुपा बैठा है।

लाला (आश्चर्य से) बेट सतनाम तुम।

सतनाम तो तू मेरा नाम भी जानता है, खबरदार जो अपनी गदी जुबान से मेरा नाम भी लिया। तरे अदर स हिंदुत्व की बू आ रही है। तुझे जीन का कोई हक नही। (लाला करमचन्द सतनाम की तस्वीर को गले से लगाने के लिए उस पर स्नेह-भरी दृष्टि डालता है, और जैस ही सतनाम की ओर बढता है, सतनाम उस गोली मार दता है। इसी बीच सरदारा, खान और डॉक्टर का आगमन होता है।)

सरदारा सिंह ये तूने क्या कर दिया मूर्ख। (बैसाखी से मारते हुए) जानता है तूने क्या कर दिया? अपन हाथा अपन बाप को गोली मार दिया। मैं तेरा बाप नही हूँ। मैंने तो सिर्फ तुझे पाला है। तूने

जिसका खून अभी बहाया, वही खून तेरी रगो मे बह रहा है। तू मेरा कोई नही है। तूने मेरे दोस्त को मार डाला।

लाला (बीच मे ही अपनी लडखडाती जबान से बोलता है।) बस कर सरदारा, मैंने तुझे अपना बेटा पालने के लिए दिया था, न कि मारने के लिए। खबरदार जो इस पे हाथ उठाया। (लाला दर्द से कराह उठता है। सरदारा सिंह दौडकर उसके गले से लिपट जाता है। खान चाचा जोश मे आ जाते हैं। सतनाम पत्थर की मूर्ति के समान जड हो जाता है।)

खान चाचा बहुत अच्छा किया, बहुत अच्छा ' अभी भी कुछ कसर बाकी है तो मार डाल हम सभी को ! बुझा ले अपने मन की आग ! लेकिन मेरे एक सवाल का जवाब द। तू किस धर्म के लिए लड रहा है ? जानता है, तुझे मुसलमान माँ ने जन्म दिया, तेरी रगो मे इस हिन्दू बाप का खून दौड रहा है। तुझे इस दुनिया म रहने लायक इस सिख बाप ने बनाया। अब बता तेरी जात कौन-सी है ? तेरा धर्म क्या है ? तू किस धर्म की रक्षा के लिए लड रहा है ?

सतनाम (सतनाम के धीरज का बाँध टूट जाता है। वह फफककर रो पडता है। वह अपनी बदूक खान चाचा को देते हुए कहता है) खान चाचा, मैं एक देशद्रोही, हत्यारा और पापी हूँ। मुझे भगवान भी माफ नही करेंगे। मुझे जीने का कोई हक नही है। मुझे गोली मार दो खान चाचा, मैं जीना नही चाहता। मेरा प्रायश्चित इसी मे है। (खान चाचा उस गले से लगाकर कहते हैं।)

खान चाचा बस कर बेटे, बस अभी भी मौका है, सुबह का भूला हुआ यदि शाम को घर वापस लौट आया तो उसे भूला नही कहते। तेरी फिर से हम लोगो के बीच वही बचपन के सतनाम के रूप मे वापसी हुई है। जा अपन पिता की अतिम इच्छा की पूर्ति कर। (सतनाम जमीन पे पडे लाला के पास जाकर उसके हाथो को पकडकर रोने लगता है, इसी बीच लाला दम तोड दता है। अतुल घोप पुलिस को लेकर आ जाता है। नेपथ्य से मार्मिक धुन बजती रहती है और सरदारा सिंह सारा इल्जाम अपने ऊपर ले लेता है। यहाँ पर भी वह लाला को दिया हुआ वचन निभाता है। पुलिस सरदारा सिंह को हथकडी पहनाती है।)

सरदारा सिंह (सबकी ओर इशारा करते हुए) दोस्तो, मैं आप लोगों का एहसान कभी नहीं भूल सकता। अब मैं अपने बेटे को आप लोगों के सहारे छोड़कर जा रहा हूँ। हो सके, तो मुझे माफ कर देना। (सतनाम की ओर इशारा करते हुए) बेटा सतनाम, मुझसे वादा कर इस देश की अखंडता एवं एकता की रक्षा करने के लिए, यदि तुझे अपनी जान भी देनी पड़े तो तू पीछे नहीं हटेगा। (सतनाम सरदारा से गले लगकर रोने लगता है, पुलिस सरदारा सिंह को ले जाती है। सतनाम एकटक सरदारा सिंह को दूर तक जाते हुए देखता रहता है। नेपथ्य में धुन बजती रहती है। कर चले हम फिदा जानो तन साथियो, अब तुम्हारे हवाले वतन साथियो )

[पर्दा गिरता है]

# सीमा-रेखा



विष्णु प्रभाकर

---

पात्र-परिचय

लक्ष्मीचद्र
शरतचद्र
विजयचद्र
सुभाषचद्र
तारा
अन्नपूर्णा
उमा
सविता

---

[उपमत्री शरतचद्र का ड्राइग-रूम। आधुनिक पर सादगी की छाप। दीवार पर गाधीजी का तैलचित्र है। नेताओ के दो-चार चित्र तिपाइयों पर भी हैं। पुस्तकें काफी हैं, बीचोबीच एक सोफासैट है। उत्तर की ओर सामने दो द्वार हैं जो बाहर बरामदे मे खुलते हैं। उसके पार सडक है। पूर्व और पश्चिम के द्वार घर के अदर जाते हैं। सोफे और मेजो के आसपास कुर्सियाँ हैं। परदा उठने पर मच खाली है। दो क्षण बाद शरतचद्र तेजी से आते हैं, बेहद परेशान हैं। कई क्षण बेचैनी से घूमते हैं, फिर टेलीफोन उठा लेते हैं, नबर मिलाते हैं।]

शरतचंद्र  हैलो, मैं शरद बोल रहा हूँ विजय का कुछ पता लगा ? क्या ? क्या अभी तक नही लौटे ? झगडा बढ गया है ? गोली · गोली चलानी पडी, भीड फैक्टरी में पास बेकाबू हो गई थी फैक्टरी को लूटा ? नही, कही और लूटमार हुई ? नही कोई घायल हुआ ? अभी कुछ पता नही। अभी पता करके बताओ, विजय आये तो मुझे टेलीफोन करन को कहो तुरन्त समझे मैं घर पर ही हूँ (दूसरा नम्बर मिलाना चाहते हैं कि उनकी पत्नी अन्नपूर्णा घबराई हुई बाहर से आती है।)

अन्नपूर्णा  आपने कुछ सुना ?

शरतचंद्र  हाँ, सुना है कि गोली चल गई।

अन्नपूर्णा  अपने राज म भी गोली चलती है ?

शरतचंद्र  अपना राज समझता कौन है ? और जब तक लोग अपना राज नही समझेंगे तब तक गोली चलेगी ही। लेकिन तुम कहाँ गई थी ?

अन्नपूर्णा  जीजी के पास। रास्ते मे सुना कि रामगज मे गोली चल गई। बाजार बन्द हो रहे हैं। भय छाया हुआ है। लोग सरकार को गालियाँ दे रहे हैं।

शरतचंद्र  (चोगा रखकर आगे आ जाते हैं।) सरकार को गाली ही दी जाती है। गोली चली तो गाली देते हैं, फैक्टरी लुट जाती तब भी गाली ही दते।

अन्नपूर्णा  (एकदम) फैक्टरी ! कौन सी फैक्टरी लुट रही थी ? फैक्टरी मे कोई झगडा नही हुआ। कल आपके पीछे कुछ विद्यार्थी सिनेमावालो से झगड पडे थे और आप जानते हैं कि विद्यार्थी

शरतचंद्र  (एकदम) कि विद्यार्थी कानून की चिता नही करते, बच्चे हैं, अल्हड हैं। (तेज होकर) यह भी कोई बात है। लोग पागल हो जाते है। कानून अपन हाथ मे ले लेते हैं। गोली चली है तो जरूर कोई कारण रहा होगा। कुछ लोगों ने फैक्टरी पर धावा बोला होगा। पुलिस पर पत्थर फेंके होगे।

[जन-नेता सुभाषचद्र की पत्नी सविता का प्रवेश।]

सविता · फेंके होंगे तो इसका यह अर्थ नही कि पत्थर के जवाब मे गोली चला दी जाय। गोली उन्ह आत्मरक्षा के लिए नहीं दी जाती, जनता की रक्षा के लिए दी जाती है।

शरतचंद्र तुम क्या कह रही हो ?

[बड़े भाई लक्ष्मीचंद्र का प्रवेश ।]

सविता मैं ठीक कह रही हूँ ।

लक्ष्मीचंद्र तुम बिलकुल गलत कह रही हो । पुलिस गोली न चलाती तो फैक्टरी लुट जाती बाजार लुट जाता, चारों ओर लूटमार मच जाती, शासन की जड़ें हिल जातीं ।

सविता शासन की जड़ें हिलतीं या न हिलतीं, दादाजी ! पर आपकी जड़ें जरूर हिल जातीं । आपका व्यापार ठप्प हो जाता । आपका नुकसान होता

लक्ष्मीचंद्र हाँ मेरा नुकसान होता । मैं सरकार की प्रजा हूँ । प्रजा की रक्षा करना सरकार का फर्ज है ।

सविता यानी सरकार की पुलिस आपकी रक्षा करने के लिए है ?

लक्ष्मीचंद्र हाँ, मेरी रक्षा करने के लिए ।

सविता केवल आपकी ?

अन्नपूर्णा न न सविता इनका मतलब केवल अपने से नहीं है । भीड़ इनका ही नुकसान करके न रह जाती । वह सारे शहर को बर्बाद कर देती ।

सविता भीड़ मे इतनी शक्ति है जीजी !

शरतचंद्र भीड़ मे कितनी शक्ति है, सवाल यह नहीं है ।

सविता तो क्या है ?

शरतचंद्र सवाल यह है कि क्या भीड़ को कानून अपने हाथ मे लेने का अधिकार है ? मैं समझता हूँ उसे यह अधिकार नहीं है ।

सविता और यदि वह लेती है तो ?

शरतचंद्र तो वह विद्रोह है और विद्रोह को दबाने का सरकार को पूरा अधिकार है ।

सविता लेकिन विद्रोह क्यों किया गया है यह देखना क्या सरकार का अधिकार नहीं है ?

[टेलीफोन की घंटी बजती है । शरतचंद्र एकदम उठते हैं । सब उनके पास आते हैं ।]

शरतचंद्र हैलो हाँ मैं ही हूँ क्या स्थिति अभी काबू मे नहीं है ? लूट मार तो नहीं हुई न ? अच्छा घायल कितने हुए ? पाँच वहीं मर गए । बीस घायल अस्पताल म हैं मैं अभी आता

हूँ। (टलीफोन का चोगा रखकर तेजी से जाने को मुड़ता है।)

अन्नपूर्णा (एकदम) नही, नही, आप ऐसे नही जा सकते।

लक्ष्मीचद्र हाँ, पहले फोन करके पुलिस बुला लो।

सविता पुलिस क्या करेगी ? चलिए, मैं चलती हूँ।

शरतचद्र आप चिंता न करें। पुलिस की गाडी बाहर खडी है।

सविता (व्यग्य से) जरूर होगी। जनता के नेता अब पुलिस की गाडी म ही जा सकत हैं। (आवेश म) जिन्होंने जनता का नतृत्व किया, जनता के आग होकर गोलियाँ खायी, जो एक दिन जनता की आँखो के तारे थे, वे ही आज पुलिस के पहरे मे जनता से मिलन जाते हैं।

[शरतचद्र तिलमिलाकर कुछ कहना चाहते हैं कि तभी कप्तान-पुलिस विजयचद्र का पूरी वर्दी मे तेजी से प्रवेश।]

लक्ष्मीचद्र (एकदम) विजय।

सविता कप्तान साहब, आप यहाँ ?

अन्नपूर्णा विजय, अब क्या हाल है ?

शरतचद्र विजय, तुमन यह क्या कर डाला ? तुमने गोली क्यो चलाई ? तुम्ह सोचना चाहिए था कि

लक्ष्मीचद्र विजय ने जो कुछ किया है, सोच समझकर ही किया है और ठीक किया है।

अन्नपूर्णा हाँ, बिना सोचे समझे कोई काम कैसे किया जा सकता है। सोचा तो होगा ही पर ·

शरतचद्र नही, नही, यह बहुत बुरा हुआ। जानते नही अब जनता का राज्य है और जनता के राज्य मे, जनतत्र मे, जनता की प्रतिष्ठा होती है।

विजयचद्र : लेकिन गुडो की नही।

सविता वे गुडे हैं ?

लक्ष्मीचद्र हाँ, वे गुडे हैं। दगा करने वाले गुडे होते हैं, शोहदे होते हैं।

शरतचद्र नही, भैया ! वे सब गुडे नही होते हैं। हाँ, गुडो के बहकाए मे जरूर आ जाते हैं।

सविता यह भी खूब रही ! जनता कुछ गुडो के बहकाए मे आ जाए और आप लोगो की, जो कल तक उनके सब कुछ थे, कोई बात न सुने।

शरतचंद्र (तिलमिलाकर) सविता !

सविता सुनिए भाई साहब, बात यह है कि आप अपना सतुलन खो बैठे हैं। आप निरंकुश होते जा रहे हैं। आप अपने को केवल शासक मानने लगे हैं। आप भूल गए हैं कि जनतन्त्र में शासक कोई नही होता, सब सेवक होते है।

विजयचंद्र (थके-से) सेवक होते हैं तो क्या मर जाने के लिए हैं ?

सविता हाँ, मर जाने के लिए ही हैं। कोई मरकर देखे तो···

लक्ष्मीचंद्र बहू, तुम बहुत आगे बढ रही हो। स्वतन्त्रता का युग है तो इसका यह मतलब नही कि बड़े-छोटे का विचार न किया जाए।

अन्नपूर्णा हाँ, सविता, तुम्हे इतना तेज नही होना चाहिए।

सविता मैं क्षमा चाहती हूँ। आप सब मुझसे बडे हैं। आपका अपमान मैं कभी नही कर सकती। ऐसा सोच भी नही सकती, पर इस नाते-रिश्ते से ऊपर भी तो हम कुछ हैं। हम स्वतन्त्र भारत की प्रजा हैं, हम एक स्वतन्त्र देश के नागरिक हैं, हम इन्सान हैं।

विजयचंद्र इन्सान हैं तो सभी हैं, स्वतन्त्र देश के नागरिक हैं तो सभी हैं। कानून सब पर लागू होता है।

लक्ष्मीचंद्र बेशक सब पर होता है। सब समान हैं।

सविता बेशक सब समान हैं, दादाजी, पर जिन पर व्यवस्था और न्याय की जिम्मेदारी है उनका दायित्व अधिक है।

शरतचंद्र जरूर है, इसीलिए मुझे जाना है। लेकिन जाने से पहले मैं जानना चाहूँगा, विजय, कि आखिर बात कैसे बढ गई ?

विजयचंद्र मैं तो वहाँ था नही। कल के झगड़े के बारे मे आप जानते ही हैं। आज फिर विद्यार्थियों ने प्रदर्शन किए। सिनेमाघर पर हमला किया। वहाँ से वे फैक्टरी के पास आए।

शरतचंद्र : क्या उन्होंने फैक्टरी पर हमला किया ?

विजयचंद्र : कर सकते थे। शायद वे यही चाहते थे।

शरतचंद्र : कौन ? विद्यार्थी ?

विजयचंद्र : यह तो नही कह सकता। भीड मे केवल विद्यार्थी ही नही थे। शरारती लोग ऐसे अवसरों की ताक में रहते हैं। पुलिस ने भीड को रोका तो उन्होंने पत्थर फेंके।

अन्नपूर्णा : पुलिस पर पत्थर फेंके ?

लक्ष्मीचंद्र : तब तो जरूर उनका इरादा फैक्टरी लूटने का था।

शरतचंद्र : क्या पुलिसवालों को चोटें आयी ?

विजयचद्र जी हाँ दस-बारह सिपाही घायल हो गए। एक इस्पेक्टर का सिर फूट गया।

सविता बस ?

लक्ष्मीचद्र तुम चाहती थी कि वे सब मर जाते।

[सुभापचद्र का प्रवेश।]

सुभापचद्र हाँ, वे सब मर जाते तो ठीक होता।

शरतचद्र सुभाप।

अन्नपूर्णा सुभाप, यह तुम क्या कह रहे हो ?

लक्ष्मीचद्र तुम तो कम्युनिस्ट हो गए हो और अपनी बहू को भी तुमने ऐसा ही बना दिया है।

[बाहर शोर उठता है।]

सुभापचद्र दादा जी, मैं न कभी कम्युनिस्ट था, न हूँ और न कभी बनूंगा। पर मैं स्वतन्त्र भारत मे गोली चलाना जुर्म मानता हूँ।

लक्ष्मीचद्र चाहे जनता कुछ भी करे, उसे सब अधिकार हैं।

सुभापचद्र बेशक हैं। उसी ने इन लोगो के (शरत की ओर इशारा करता है।) हाथ मे शासन की बागडोर सौपी है।

शरतचद्र किसलिए सौपी है ? रक्षा के लिए या बरबादी के लिए ?

[बाहर शोर तेज होता है। सविता चौकती है और बाहर चली जाती है।]

सुभापचद्र रक्षा के लिए।

शरतचद्र लेकिन जब जनता स्वय नाश करने पर तुल जाए तो क्या हमे उसे ऐसा करने देना चाहिए ?

सुभापचद्र नही।

विजयचद्र यही तो हमने किया है।

लक्ष्मीचद्र ठीक किया है।

शरतचद्र ऐसा करने का उन्हे अधिकार है। वे हैं ही इसीलिए। तुम भी इस मानते हो तो फिर कहना क्या चाहते हो ?

सुभापचद्र . यही कि हमे राज्य की रक्षा करते-करते प्राण दे देने चाहिए, प्राण लेन नही चाहिए। हम देने का ही अधिकार है, लेने का नही।

शरतचद्र सुभाप, यह कोरा आदर्शवाद है।

सुभाषचंद्र . कर्त्तव्य का पालन करते हुए मरना यदि आदर्शवाद है तो मैं कहूँगा कि विश्व के प्रत्येक नागरिक को ऐसा ही आदर्शवादी होना चाहिए।

शरतचंद्र सुभाष, तुम बोलना ही जानते हो।

सुभाषचंद्र आपसे ही सीखा है, भाई साहब!

विजयचंद्र लेकिन ज़िम्मेदारी सँभालना नहीं सीखा।

सुभाषचंद्र वह भी सीखा है। मैं जनता से प्रतिज्ञा करके आया हूँ कि आज शाम तक गोली चलाने वाले कप्तान पुलिस को मुअत्तल कराके छोड़ूँगा।

अन्नपूर्णा क्या? क्या कहा तुमने?

लक्ष्मीचंद्र अपने ही घर में तुम अपनों के दुश्मन बनकर आए हो।

सुभाषचंद्र अपना पराया मैं कुछ नहीं जानता। मैं जनता का प्रतिनिधि हूँ। मैं माननीय उपमन्त्री श्री शरतचंद्र को बताने आया हूँ कि उनके एक अधिकारी ने निहत्थी जनता पर गोली चलाकर जो बर्बर काम किया है उसकी न्यायिक जाँच करवानी होगी और जब तक जाँच पूरी नहीं होती तब तक गोली चलाने से संबंधित सब व्यक्तियों को मुअत्तल करना होगा।

शरतचंद्र यह किसकी माँग है?

सुभाषचंद्र उस जनता की जिसने आपको गद्दी सौंपी है, जिससे आज आप दूर भागते हैं डरते हैं।

शरतचंद्र मैं डरता हूँ?

सुभाषचंद्र हाँ, आप डरते हैं। यदि न डरते तो घर में छिपकर बैठे रहने के स्थान पर जनता के पास जाते। तब यह नौबत न आती, गोली न चलती, निर्दोष निहत्थे नागरिक न मरते।

शरतचंद्र लेकिन तुम भी तो जनता के नेता हो, तुमने कौन-सा तीर मार लिया?

सुभाषचंद्र मैंने क्या किया है, यह मेरे मुँह से सुनकर क्या करेंगे, पर इतना कहे देता हूँ कि जनता समत रहती तो कप्तान विजयचंद्र यहाँ बैठे न दिखाई देते। इनसे पूछिए तो कि इन्हें बन्दूकें इसीलिए दी गई हैं कि ज़रा-सा पत्थर आ लगे तो जनता को गोली से भून दें?

लक्ष्मीचंद्र गोली न चलती तो

सुभाषचंद्र (एकदम) दादाजी, आप न बोलें। आप व्यापारी हैं। आपका सिद्धान्त आपका स्वार्थ है।

लक्ष्मीचंद्र : (आवेश मे) मैं तो स्वार्थी हूँ, पर तुम अपनी तो कहो। तुम्हारी नेतागिरी भी तो मुझ स्वार्थी के पैसे से ही चलती है।

सुभाषचंद्र : ठीक है, उतना पैसा सार्थक होता है पर आप यह क्यो भूल गए कि उस दिन जब कुछ व्यापारी पकड़े गए थे तब आपने विजय भैया को कितना कोसा था ?

लक्ष्मीचंद्र : आज तुम कोस रहे हो, क्योकि तुम मन्त्री नही हो, विरोधी दल के हो।

सुभाषचंद्र : हा, मैं विरोधी दल का हूँ लेकिन दादाजी, मैं आपसे बातें नही कर रहा हूँ।

लक्ष्मीचंद्र : (क्रोध मे) तो मैं ही कब तुमसे बातें कर रहा हूँ ! वाह ! (तेजी से अन्दर जाते हैं।)

अन्नपूर्णा : दादाजी, दादाजी (पीछे-पीछे जाती है।)

[विजयचंद्र भी जाते हैं।]

सुभाषचंद्र : मैं माननीय उपमन्त्री महोदय से पूछता हूँ कि···

शरतचंद्र · (एकदम) और मैं तुमसे पूछता हूँ कि क्या जनता के राज्य मे भी सड़को पर प्रदर्शन होने चाहिए ? भीड को कानून हाथ मे लेना चाहिए ?

सुभाषचंद्र · जब तक सरकार और उसके अधिकारी ठीक आचरण नही करेंगे तब तक जनता प्रदर्शन करती ही रहेगी, कानून हाथ मे लेती ही रहेगी। भाई साहब, इस नौकरशाही ने, शासन की इस भूख ने आपको जनता से दूर कर दिया है।

शरतचंद्र · सुभाष, तुम बार-बार एक बात की रट लगाए जा रहे हो।

सुभाषचंद्र मैं ठीक कह रहा हूँ। जनता सरकार के ढाँचे को उतना महत्त्व नही देती जितना अधिकारियो की ईमानदारी और हमदर्दी को। आप चलिए मेरे साथ।

[सहसा शोर बढता है।]

शरतचंद्र : हाँ, मैं चलूँगा। मुझे तो कभी का चले जाना था, पर···यह शोर कैसा है ?

सुभाषचंद्र : अवश्य कोई बात है। देखूँ···(जाने को मुड़ता है कि लक्ष्मीचद्र की पत्नी तारा विक्षिप्त-सी वहाँ आती है।)

तारा : (पागल-सी) विजय कहाँ है ? (चारो तरफ देखती है।)

सुभाषचंद्र : भाभीजी, क्या है ?

तारा — मैं पूछती हूँ विजय कहाँ है ? उसका मनचाहा हो गया। उसकी गोली अरविन्द के सीने से पार हो गई

शरतचद्र — (एकदम) भाभी !

सुभाषचद्र — भाभी, तुम क्या कह रही हो ?

[सविता का प्रवेश ।]

सविता — भाभी ठीक कह रही हैं। अरविन्द जनता की सरकार की गोली का शिकार हो गया ।

[लक्ष्मीचद्र, विजयचद्र और अन्नपूर्णा का प्रवेश।]

लक्ष्मीचद्र — कौन गोली का शिकार हो गया ?

सविता — अरविन्द ।

लक्ष्मीचद्र — (काँपकर) क्या क्या अरविन्द मर गया ?

तारा — हाँ, गोली उसके सीने से पार हो गई। वह मर गया।

[सब हक्के बक्के रह जाते हैं। पागल से देखते हैं। लक्ष्मीचद्र सोफे पर गिर पडते हैं। विजयचद्र दोनो हाथो से मुँह ढँक लेते हैं। अन्नपूर्णा पागल सी तारा को सँभालती है।]

अन्नपूर्णा — अरे, मेरे अरविन्द को किसने मार डाला ? नाश जाए इस पुलिस का ! बिना गोली कोई बात ही नही करता। अरे, विजय, तुमने यह क्या किया ?

विजयचद्र — (पागल सा) ओह यह क्या हुआ ? अरविन्द वहाँ क्यो गया था ?

[टेलीफोन की घण्टी बजती है। सविता उठाती है।]

सविता — हैलो ! जी हाँ, हैं। (विज। से) कप्तान साहब, आपका फोन है।

विजयचद्र — (फोन लेकर) जी हाँ, क्या भीड बेकाबू हो गई है। मैं अभी आया।

[चोगा पटककर तेजी से किसी की ओर देखे बिना भागता है।]

सुभाषचद्र — मैं भी जाता हूँ। कही कुछ हो न जाए (जाता है।)

शरतचद्र — मैं भी चलता हूँ। (मुडता है, पर तारा के बोलने पर ठिठक जाता है।)

तारा — सब जाओ, पर अरविन्द क्या आएगा ? उसने किसी का क्या बिगाडा था ? वह चिल्लाया मैं दगा नही करता मैं बाजार जाता हूँ पर

[अन्नपूर्णा उसे अन्दर ले जाती है।]

लक्ष्मीचद्र पर मदाध पुलिसवालों ने एक न सुनी, गोली मार दी। पुलिस को अपनी जान इतनी प्यारी है कि एक दस वर्ष के बच्चे से भी उसे डर लगा।

सविता (जाते जाते) किसी ने उसकी आवाज नही सुनी। किसी ने उसकी ओर नही देखा।

लक्ष्मीचद्र सब अन्धे हैं, ताकत के अन्धे। जो सामने आता है उसे कुचल देना चाहते हैं। चाहे वह धूल हो, चाहे पत्थर।

शरतचद्र (जाता हुआ, व्यथा से) ओह, यह क्या हो रहा है ? यह क्या हुआ ?

लक्ष्मीचद्र वही हुआ जो विजय चाहता था। जो तुम चाहते थे।

शरतचद्र (एकदम) दादाजी।

लक्ष्मीचद्र तुमने मेरा घर बर्बाद कर दिया। मेरे बच्चे को मार डाला। तुम सब हत्यारे हो।

शरतचद्र दादाजी। ओह, मैं क्या कहूँ।

लक्ष्मीचद्र जब पैसे की ज़रूरत होती है तो मेरे पास आते हो। टैक्स माँगते हो, दान माँगते हो, व्यापार म पैसा लगान को कहते हो और और मुझी पर गोली चलाते हो।

शरतचद्र दादाजी, गोली उन्होने जान-बूझकर नही चलाई। अरविन्द तो बच्चा था। उससे किसी का क्या वैर था।

लक्ष्मीचद्र वैर क्यो नही था ? वह जनता मे था। और तुम हो जनता के शत्रु। मैं अभी जाकर विजय स पूछता हूँ (जान को उठता है।)

[सविता आती है।]

सविता अभी रुकिए, दादाजी। भाभीजी को दौरा पड गया है। (टेलीफोन की घण्टी बजती है उठाकर) हैलो, जी हाँ, हैं। (शरत से) आपका फोन है।

शरतचद्र (फोन लेकर) हैलो, जी हाँ। क्या मन्त्रिमण्डल की बैठक हो रही है। मुझे भी बुलाया है। मैं अभी आया। (फोन रखकर जाने को मुडता है, तभी सुभाष का तेजी से प्रवेश)

सुभाषचद्र भाई साहब, आपको अभी चलना है।

शरतचद्र मैं चल ही रहा हूँ। मत्रिमडल की बैठक हो रही है।

सुभाषचद्र : वहाँ नही, आपको मेरे साथ चलना है। आपको जनता के पास चलना है। जनता मे बडी उत्तेजना है। विद्यार्थी पीछे रह गए हैं,

दूसरे समाजद्रोही तत्त्व आ गये हैं। विजय ने गोली चलाने से इनकार कर दिया है।

शरतचद्र (पागल-सा) विजय ने गोली चलाने से इनकार कर दिया !

सुभाषचंद्र जी, हां।

शरतचद्र वह कहाँ है?

सुभाषचद्र भीड के सामने।

शरतचद्र वह भीड के सामने है? (एकदम दृढ होकर) चलो सुभाष, मैं देखता हूँ जनता क्या चाहती है।

[दोनो जाते हैं।]

सविता मैं भी चलती हूँ।

लक्ष्मीचद्र : मैं भी चलता हूँ।

सविता : नही, नही, आप ठहरें। आप भाभीजी को सभालें। (जाती है।)

[तभी अन्नपूर्णा आती है।]

अन्नपूर्णा क्या हुआ, दादाजी? सब कहाँ गए?

लक्ष्मीचद्र सब गए। सुभाष आया था। कहता था, विजय ने गोली चलाने से इनकार कर दिया। अरे, अब तो इनकार करना ही था। वे तो मेरे बच्चे को मारना चाहते थे।

अन्नपूर्णा नही, नही, दादाजी? यह बात नही थी।

लक्ष्मीचद्र : कैसे नही थी! मैं उन सबको जानता हूँ। वे मेरे पैसे से आगे बढे और मुझी को बरबाद कर दिया। मैं पूछता हूँ, उन्होने पहले ही गोली चलाने से इनकार क्यो न किया? क्योकि·· क्योकि·

अन्नपूर्णा : नही, दादाजी, नही···

लक्ष्मीचद्र : (आवेश मे) ये मेरे छोटे भाई है! एक ने मुझे स्वार्थी, देशद्रोही कहा। दूसरे ने मेरे बेटे को मार डाला। मेरे मासूम बच्चे को मार डाला (रोकर गिर पडता है।)

अन्नपूर्णा (सँभालती हुई) दादाजी! दादाजी! ओह, यह एक ही घर मे क्या होने लगा। भाई-भाई मे यह मनमुटाव! (एकदम) नही, नही, यह नही होगा। दादाजी, आप गलत समझ रहे हैं।

लक्ष्मीचद्र (आँखें खोलकर) मैं गलत समझ रहा हूँ। अरविन्द, मेरे बच्चे, तू चला गया, मैं तुझसे दो बातें भी न कर सका। तू तो भीड मे भी नही था। अरविन्द··

[तारा का प्रवेश।]

तारा : क्या अरविन्द आया है ? कहाँ है ?

[अन्नपूर्णा तारा को पकड़ती है।]

अन्नपूर्णा भाभीजी, आप क्यों उठ आयी ? हम अभी अस्पताल चलते हैं। अपने को सँभालिए।

[अन्नपूर्णा तारा को अन्दर ले जाती है। लक्ष्मीचन्द्र भी जाते हैं। तभी अस्त-व्यस्त परेशान सविता का प्रवेश।]

सविता अद्भुत दृश्य था। अपार भीड़ थी। उनके आगे खड़े थे कप्तान भैया। दूर से देख सकी। किसी ने पास जाने ही नहीं दिया। एक रेला आया और मैं पीछे आ पड़ी।

[अन्नपूर्णा आती है।]

अन्नपूर्णा : तुम आ गयी। वे लोग कहाँ हैं ? सुभाष कहाँ है ?

सविता कुछ पता नहीं, मुझे किसी का कुछ पता नहीं। मैं आगे नहीं बढ़ सकी और वे दोनों आगे बढ़ते चले गये। एक बार भीड़ के बीच में सबको देखा, फिर उस ज्वार-भाटे में सब कुछ छिप गया। (टेलीफोन की घण्टी बजती है, उठाकर) हैलो ! जी हाँ, जी, वह तो गये। जी हाँ, भीड़ में जाते मैंने देखा था। (फोन रखती है।) मन्त्रिमंडल की बैठक में शरत भाई साहब का इंतजार हो रहा है। वे अभी तक पहुँचे ही नहीं। मैं कहती हूँ, ये लोग मन्त्रिमंडल की बैठकें क्यों करा रहे हैं ? जो लोग विदेशियों की गोलियों से नहीं डरे, वे अपने ही बच्चों और भाइयों से क्यों डरते हैं ? जनता में क्यों नहीं आते ?

अन्नपूर्णा क्योंकि शासन भीड़ में आकर नहीं चलाया जाता। आखिर जनतंत्र भी तो कानून का राज्य है।

सविता है, पर ' (एकदम) नहीं, अब बहस करने का समय नहीं है। सोचने का और काम करने का समय है। बेचारा अरविन्द ! उसकी मौत क्यों हुई ? प्रजातन्त्र में एक निर्दोष, निरीह बालक की हत्या क्यों हुई ? (टेलीफोन की घण्टी फिर बजती है, उठाकर) हैलो ! क्या है ? हाँ, हाँ, कप्तान साहब तो कभी के चले गये। क्या ? उनका पता नहीं मिल रहा नहीं, नहीं, वह भीड़ के सामने थे। मैंने देखा था। जी हाँ, मैंने देखा था उधर का हाल ठीक नहीं है। उनके हुक्म के बिना कुछ नहीं कर सकते आये तो कह दूँगी' क्या कोई आया है हाँ, हाँ, पूछिए हैलो हैलो हैलो (फोन रख-

कर) कनेक्शन काट दिया। अवश्य कोई बात है। मैं जाती हूँ। (जाने को मुड़ती है।)

अन्नपूर्णा — सविता, तुम न जाओ। ठहरो तो! (सविता नहीं रुकती) गई!

लक्ष्मीचंद्र — (आकर) कौन गई? क्या बात है?

अन्नपूर्णा — जरूर कोई बात है। सविता टेलीफोन कर रही थी पता नहीं क्या बात हुई, भागती चली गई।

लक्ष्मीचंद्र — तो मैं भी जाता हूँ। अरविन्द को भी लाना है। (गला रुँध जाता है।)

अन्नपूर्णा — दादाजी, पहले किसी को आ जाने दीजिए।

लक्ष्मीचंद्र — घबराओ नहीं। मैं बच्चा नहीं हूँ। (जाते हैं।)

[दूसरे द्वार से उमा पागलों की तरह आती है।]

उमा — जीजी सब कहाँ हैं?

अन्नपूर्णा — तुझे पता नहीं? यहाँ से तो कभी के गए। क्या तुझे सविता नहीं मिली?

उमा — मुझे कोई नहीं मिला। मैं तो अरविन्द की खबर सुनकर भागी आ रही हूँ। मैं भाभीजी को कैसे मुँह दिखाऊँगी! मैं मर क्यों न गई!

अन्नपूर्णा — (शून्यवत) न जाने क्या होनेवाला है! एक ही घर के लोग एक-दूसरे को खा रहे हैं। (बाहर भीड़ का शोर) यह क्या? लोग इधर आ रहे हैं।

उमा — (द्वार पर जाकर देखती है। चीख पड़ती है।) जीजी!

अन्नपूर्णा — क्या हुआ? क्या हुआ, उमा? (उठकर तेजी से आगे बढ़ती है।)

[तभी घायल शरत वहाँ आता है। मुँह पर घाव हैं। एक हाथ बँधा है।]

(काँपकर) यह क्या हुआ?

शरतचंद्र — वही जो होना चाहिए था। विजय भीड़ में कुचल गया पर उसने गोली नहीं चलाई।

उमा — कुचल गए? कौन?

शरतचंद्र — विजय कुचल गया। चला गया।

उमा — (चीखकर) भाई साहब

अन्नपूर्णा — (शरत से) यह तुम क्या कह रहे हो?

शरतचंद्र — भीड़ संतुलन खो बैठी थी, विवेक खो बैठी थी। वह चिल्लाती रही अरविन्द कहाँ है? अरविन्द को लौटाओ! और विजय भीड़ के सामने अड़ा रहा। चिल्लाता रहा मुझसे अरविन्द का बदला लो। मैंने अरविन्द को मारा। तुम मुझे मार डालो।

उमा : और भीड ने उन्हे मार डाला ?

शरतचद्र पता नही किसने मार डाला ? उनके गिरते ही भीड पर जैसे अकुश लग गया। पर···जब वहाँ शान्ति हुई तो विजय और सुभाष दोनो कुचले हुए पड़े थे।

उमा : सुभाष भी !

अन्नपूर्णा : सुभाष भी कुचल गया ? हाय !

शरतचद्र हाँ, सुभाष भी कुचल गया। लेकिन खबरदार जो उनके लिए रोए। रोने से उन्हे दु ख होगा। उन्होने प्राण दे दिए पर अधिकारियो और जनता का सतुलन ठीक कर दिया। वे शहीद हो गए, पर दूसरो को बचा गए। नगर मे अब बिल्कुल शान्ति है। सब सगर्व उन बलिदानो की चर्चा कर रहे हैं, सब शोक-सतप्त हैं। (बाहर देखकर) लो, वे आ गए। हाँ, रोना मत·· रोना मत···

[तभी लक्ष्मीचद्र और सविता के साथ पुलिस तथा दूसरे अधिकारियो का प्रवेश। एक भयकर सन्नाटा छाया रहता है। सविता का मुख पत्थर की तरह कठोर है। लक्ष्मीचद्र तूफान की तरह काँप रहे हैं। शरत दृढता से प्रबन्ध मे लगे हैं। विजय, सुभाष और अरविन्द की लाशें बराबर के कमरे मे रख दी गई हैं। सहसा उमा तेजी से आगे बढती है। बराबर वाले कमरे मे झाँककर एक जोर की चीख मारती है। तारा अन्दर से आती है।]

तारा कैसा शोर है, अन्नपूर्णा ? अरविन्द आ गया ? कहाँ है ?

शरतचद्र भाभी, वह देखो, बराबर वाले कमरे मे तीन लाशें रखी हैं। वे अरविन्द और सुभाष हैं, जनता की क्षति और उधर वह विजय है, सरकार की क्षति।

अन्नपूर्णा : (रोकर) यह तुम कैसी बावलो की-सी बातें करते हो ! यह सब मेरे घर की क्षति है।

सविता . (उसी तरह पत्थरवत) नही, जीजी, यह घर की नही, सारे देश की क्षति है। देश क्या हमसे और हम क्या देश से अलग हैं ?

शरतचंद्र तुमने ठीक कहा, सविता ! यह हमारे देश की क्षति है। जनतन्त्र मे सरकार और जनता के बीच कोई विभाजक रेखा नही होती···

[पर्दा गिरता है।]

०००



## गिरिराज शरण

रचनात्मक लेखन हो या शो
हो या समीक्षा—साहित्य की हर प्र
में अपनी करामाती कलम वे
दिखानेवाले डॉ गिरिराज शरण
सुपरिचित साहित्यकार हैं। इनका
1944 में मुरादाबाद (उ प्र ) के अ
सम्पल में हुआ।

इनके साठ से अधिक मौ
सपादित ग्रन्थ हिन्दी-ससार में
लोकप्रियता के कीर्तिमान सिद्ध हुए
और समीक्षा के क्षेत्र में भी इनवे
असाधारण महत्त्व प्राप्त कर चुके हैं
मानस-सन्दर्भ' (दो भाग) अं
सन्दर्भ'। हिन्दी साहित्य के आरम्
सन् 1986 तक हुए सम्पूर्ण हिन्दी शो
अद्वितीय सन्दर्भ ग्रन्थ 'शोध सन्द
नवीनता और उपयोगिता में अप्रतिभ
एकाकी सकलन माला और बहुच
सकलन माला तथा उनकी अन्य
कृतियों का परिचय एक अलग
समाने योग्य है।

सम्प्रति वर्धमान स्नातकोत्तर म
(बिजनौर) में हिन्दी विभाग के व
डॉ गिरिराज शरण की अनवरत र
कुछ और उल्लेखनीय रचनाओं की
विश्वास जगाती है।